रत्नकरण्डक श्रावकाचार

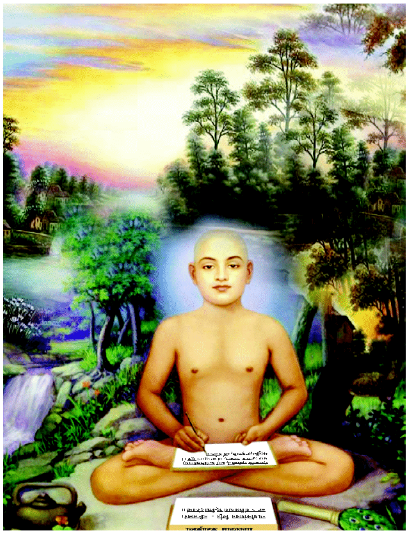

: अन्वयार्थ एवं भावार्थ :-

प.पू. राष्ट्रसंत, गणाचार्य, युगप्रमुख श्रमणाचार्य,

श्री108 डॉ. विरागसागरजी महाराज

-: प्रकाशक :-

श्री सम्यग्ज्ञान दिगम्बर जैन विराग विद्यापीठ

जैन कीर्तिस्तम्भ, बस स्टैण्ड रोड, भिण्ड (म.प्र.)

प्रसंग : परम पूज्य युगप्रमुख श्रमणाचार्य, राष्ट्रसंत, गणाचार्य श्री 108 डॉ. विरागसागरजी महाराज के ''राष्ट्रीय रजत आचार्य पदारोहण महोत्सव'' वर्ष 2016-2017 के सुअवसर पर

कृति : रत्नकरण्डक (श्रावकाचार)

अन्वार्थ एवं
भावार्थ : परम पूज्य युगप्रगुख श्रमणाचार्य, राष्ट्रसंत, गणाचार्य श्री 108 डॉ. विरागसागरजी महाराज

संस्करण : प्रथम 2016, भिण्ड (म.प्र.)

प्रतियाँ : 1000

पुण्यार्जक : श्रीमान् महेन्द्रजी-श्रीमती मायादेवी जैन
संजय, सुमन, जयपुर (राज.)

मूल्य : 25.00

प्राप्ति स्थान :

1. श्री सम्यग्ज्ञान दिगम्बर जैन विराग विद्यापीठ चैत्यालय मंदिर, बतासा बाजार, भिण्ड (म.प्र.) संपर्कसूत्र-पं. वीरेन्द्र जैन, मो. 9754803220
2. आचार्य श्री विरागसागर विद्यापीठ (बी.एड. कॉलेज)
पुष्प विहार कॉलौनी, बीना- 470113, जिला- सागर (म.प्र.)
मो 9425135816
3. विराग फाउण्डेशन
सी/ओ, श्री अरुण कोठडिया, 11-ए. विक्रम नगर सोसायटी, उस्मानपुरा, अहमदाबाद- 380013 (गुज.)
मो 9825900124
4. श्री भूपेन्द्र शांतिलाल शाह
13, वृंदावन सोसायटी, डेरी रोड, मेहसाना-2 (गुज.)
मो 9898494914, 9829452020
5. विराग महिला मंच, बोरीवली, मुंबई (महा.)
6. पुष्पा जी, जयपुर (राज.)
7. तिलोक प्रिंटिंग प्रेस, बीकानेर
8. पंकज जैन, विराग युवा मंच, इन्दौर (म.प्र.)

मुद्रक : तिलोक प्रिंटिंग प्रेस, बीकानेर मो. 9314962474/75

जीवन की महत्त्वपूर्ण झांकियाँ
परम पूज्य गणाचार्य 108 श्री विरागसागरजी महाराज

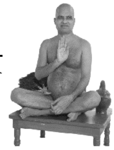

पूर्व नाम : अरविन्द जैन (टिन्नू)

जन्म : 2 मई, 1963, गुरुवार
(वैशाख शुक्ला 9, संवत् 2020, पथरिया)

माता-पिता : श्रीमती श्यामादेवी जैन
(समाधिस्थ पू. श्रमणी आर्यिका विशांतश्री माताजी)
ब्र.श्री कपूरचन्दजी जैन
(संघस्थ पू.क्षुल्लक श्री 105 विश्ववंद्य सागर जी महाराज)

बहिन : श्रीमती मीना जैन, श्रीमती विमला जैन

भाई : श्री विजयकुमार, श्री सुरेन्द्रकुमार, बा.ब्र. श्री नरेन्द्र भैयाजी

लौकिक शिक्षा : इण्टर मध्यमा (पथरिया, श्री शांति निकेतन, दि.जैन संस्कृत विद्यालय, कटनी, म.प्र.)

क्षुल्लक दीक्षा : 20 फरवरी, 1980
(फाल्गुन शु. 5 सं. 2036 बुढ़ार, शहडोल म.प्र.)

नामकरण : पूज्य क्षु. श्री 105 पूर्णसागरजी महाराज

क्षु. दीक्षा गुरु : प.पू. तपस्वी सम्राट आचार्य श्री 108 सन्मतिसागर जी महा.

मुनि दीक्षा : 9 दिसम्बर, 1983 (मगसर शु. 5 वि.सं. 2040), औरंगाबाद (महा.)

मुनि दीक्षा गुरु : प.पू.निमित्तज्ञानी आचार्य श्री 108 विमलसागरजी महाराज

आचार्य पद : 8 नवम्बर, 1992 (का. शु. 13वि.सं. 2049) रविवार, द्रोणगिरी

संयमी सृजन : आचार्य-8, मुनि - 70, गणिनी आर्यिका-4, आर्यिका-64, ऐलक-5, क्षुल्लक -29, क्षुल्लिका- 23 कुल - 203

प्रशिष्य : 100 से अधिक

समाधि सल्लेखनाएँ : लगभग 85 एवं अनेक तिर्यंच प्राणी

चातुर्मास : 1980 से 2016 तक क्रमशः दुर्ग (छत्तीसगढ़), नागपुर (महाराष्ट्र), कारंजा लाड (महाराष्ट्र), कारंजालाड (महाराष्ट्र), नागपुर (महाराष्ट्र), भावनगर (गुजरात), पाँचवा (राज.), निमाज (राज.), जयपुर (राज.), भिण्ड (म.प्र.), भिण्ड (म.प्र.), टीकमगढ़ (म.प्र.), श्रेयांसगिरि (म.प्र.), द्रोणगिरि (म.प्र.), श्रेयांसगिरि (म.प्र.), बीना (म.प्र.), ललितपुर (म.प्र.), मढ़ियाजी (जबलपुर), भिण्ड (म.प्र.), भिण्ड (म.प्र.), भिण्ड (म.प्र.), शिखरजी (झारखण्ड), गया (बिहार), श्रेयांसगिरि (म.प्र.), भिलाई (छत्तीसगढ़), कारंजालाड (महा.) मूडबिद्री (कर्नाटक), मेलचित्तामूर (तमिलनाडू), उद्गांव

(महा.), मुम्बई (महा.), गाँधीनगर (गुजरात), लोहारिया (राज.), अजमेर (राज.), जयपुर (राज.), इन्दौर (म.प्र.), श्रेयांसगिरी (म.प्र.), पथरिया (म.प्र.), भिण्ड (म.प्र.)।

साहित्य सृजन : 1. बारसाणुवेक्खा ग्रन्थ पर 1100 पृष्ठीय ''सर्वोदया'' संस्कृत टीका, 2. रयणसार ग्रन्थ पर 1500 पृष्ठीय ''रत्नत्रयवर्धिनी'' संस्कृत टीका, श्रमण संबोधनी टीका लेखन जारी है, 3. अनेक शोधात्मक, चिन्तनशील, बालकोपयोगी कथा, अनुवाद, गद्य, संपादित साहित्य, जीवनी एवं प्रवचन साहित्य 150 से अधिक ग्रंथ।

पंचकल्याणक : लघु वृहद् मिलाकर-67

उपाधियाँ : डॉक्ट्रेट आदि 44 से अधिक

सिद्धांत वाचनाएँ : धवल ग्रन्थ की 16 पुस्तकें तथा जयधवल ग्रंथ की 6 पुस्तकें, शेष जारी हैं।

गोष्ठियाँ : विद्वत, शिक्षक, प्राचार्य, न्यायाधीश-वकील, डॉक्टर्स, शासनिक।

अहिंसा, शाकाहार एवं व्यसन मुक्ति

अभियान : भिण्ड (म.प्र.), बीना (म.प्र.), भिलाई (छ.ग.), कारंजा (महा.), मेलचित्तामूर (तमिल.), उदगाँव (महा.), गाँधीनगर (गुजरात), लोहारिया (राज.), अजमेर (राज.), जयपुर (राज.), इन्दौर (म.प्र.) श्रेयांसगिरि (म.प्र.), पथरिया (म.प्र.), भिण्ड (म.प्र.), जिसमें 18 लाख से अधिक छात्र-छात्रायें व्यसनमुक्त, शाकाहारी एवं अहिंसा के उपासक बन चुके हैं।

शिविर : प्रतिवर्ष श्री विराग सम्यग्ज्ञान शिविर, प्रतिभा संस्कार शिविर, पूजन प्रशिक्षण शिविर, भक्तामर शिविर, श्रावक संस्कार शिविर आदि।

विशेष प्रवचन : कॉलेज, स्कूल, जेल, न्यायालय, गौशाला, वृद्धाश्रम, गुरुकुल, मुख्य चौराहे आदि पर हुए।

जेल प्रवचन : भिण्ड, टीकमगढ़, दुर्ग, उदयपुर, चित्तौड़गढ़, जयपुर, अजमेर, इन्दौर, पन्ना, दमोह।

न्यायालय प्रवचन: अजमेर

पगविहार : 70,000 किलोमीटर से अधिक।

संघ सम्मेलन : भिण्ड, श्रेयांसगिरी, बीना, ललितपुर, श्रवणबेलगोला, औरंगाबाद, जयपुर।

वृहद् यति सम्मेलन:
एवं युगप्रतिक्रमण जयपुर (200 शिष्य-प्रशिष्य, अन्य साधु भी)
श्रमण-श्रमणी की प्राचीन परम्परा की पुन: स्थापना।

रत्नकरण्डक श्रावकाचार

(आचार्य श्रीसमन्तभद्रस्वामी विरचित)

मंगलाचरण

नमः श्री वर्द्धमानाय, निर्धूत-कलि-लात्मने।
साऽलोकानां त्रिलोकानाम् यद् विद्या दर्पणायते।।1।।

अन्वयार्थ- **(आत्मने)** अपने (आत्मा के) **(कलिल)** कर्म पापों को **(निर्धूत)** नष्ट कर दिया है जिन्होंने (ऐसे उन) **(श्री वर्द्धमानाय)** श्री महावीर स्वामी के लिये अथवा चौबीस तीर्थंकरों के लिये **(नमः)** नमस्कार हो **(यद्विद्या)** जिनका केवलज्ञान **(साऽलोकानां)** आलोक सहित **(त्रिलोकानाम्)** तीनों लोकों को **(दर्पणायते)** दर्पण के समान अनुभव करता है।

भावार्थ- जिन्होंने आत्मा में लगी हुई कर्म रूपी कालिमा को नष्ट कर दिया है जिनके केवलज्ञान में आलोक सहित तीन लोक दर्पण के समान दिखाई देते हैं, ऐसे उन श्री वर्द्धमान स्वामी को नमस्कार हो।

''उद्देश्य या धर्म लक्षण''

देशयामि समीचीनं, धर्मं कर्म-निवर्हणम्।
संसार-दुःखतः सत्त्वान्, यो धरत्युत्तमे सुखे।।2।।

अन्वयार्थ- **(यो)** जो **(सत्त्वान्)** जीवों को **(संसार)** संसार के **(दुःखतः)** दुःखों से (निकाल कर) **(उत्तमे)** उत्तम **(सुखे)** सुख में **(धरति)** पहुँचाता है **(कर्म)** कर्मों का **(निवर्हणम्)** नाश करता है उस **(समीचीनं)** समीचीन **(धर्मं)** धर्म को (मैं) **(देशयामि)** कहूंगा।

भावार्थ - जो जीवों को संसार के दु:खों से निकाल कर उत्तम सुख में धरता है, उस कर्मों के नाशक समीचीन धर्म को मैं कहता हूँ।

"धर्म का लक्षण"

सद्-दृष्टि-ज्ञान-वृत्तानि, धर्मं धर्मेश्वरा विदुः।
यदीय प्रत्यनी-कानि, भवन्ति भव-पद्धतिः।।3।।

अन्वयार्थ- **(सद्दृष्टि)** सम्यग्दर्शन **(ज्ञान)** ज्ञान **(वृत्तानि)** चारित्र को **(धर्मेश्वरा)** धर्म के ईश्वर (तीर्थंकर) **(धर्मं)** धर्म **(विदुः)** कहते हैं (परन्तु इनसे उल्टे) **(यदीयप्रत्यनी कानि)** इनसे उल्टे मिथ्या दर्शन, ज्ञान, चारित्र **(भव पद्धतिः)** संसार में भ्रमण कराने वाले **(भवन्ति)** होते हैं

भावार्थ- सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र को धर्म के ईश्वर (तीर्थंकर देव) धर्म कहते हैं और इनसे उल्टे अर्थात् मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान, मिथ्याचारित्र संसार में भ्रमण कराने के कारण हैं।

"सम्यग्दर्शन का लक्षण"

श्रद्धानं परमार्थाना, माप्ता-गम-तपो-भृताम्।
त्रिमूढा-पोढ-मष्टाङ्गं सम्यग्दर्शन मस्मयम्।।4।।

अन्वयार्थ- **(परमार्थानां)** परमार्थ भूत सच्चे **(आप्त)** देव **(आगम)** शास्त्र **(तपो भृताम्)** गुरु का **(त्रिमूढा पोढं)** तीन मूढ़ता रहित **(अष्टाङ्गं)** अष्ट अंग सहित **(अस्मयम्)** आठ मद रहित **(श्रद्धानं)** श्रद्धान **(सम्यग्दर्शन)** सम्यग्दर्शन कहलाता है।

भावार्थ- सच्चे देव, शास्त्र, गुरु का तीन मूढ़ता रहित, आठ अंग सहित, आठ मद रहित श्रद्धान सम्यग्दर्शन है।

"सच्चे देव का लक्षण"

आप्तेनोच्छिन्न-दोषेण, सर्वज्ञे-नागमेशिना।
भवितव्यं नियोगेन, नान्यथा ह्याप्ततः भवेत्।।5।।

अन्वयार्थ- **(आप्तेन)** सच्चा देव **(नियोगेन)** नियम से **(दोषेण उच्छिन्न)** अठारह दोष रहित वीतराग **(सर्वज्ञेन)** सर्वज्ञ और **(आगमेशिना)** हितोपदेशी **(भवितव्यं)** होना चाहिये **(अन्यथा)** ऐसा न होने पर **(आप्ततः)** सच्चा देवपना **(न भवेत्)** नहीं होता।

भावार्थ- सच्चा देव नियम से अठारह दोष रहित वीतराग, सर्वज्ञ और हितोपदेशी होना चाहिये ऐसा नहीं होने पर सच्चा देवपना नहीं हो सकता।

''वीतराग का लक्षण''

क्षुत्पिपासा-जरातङ्क, जन्माऽन्तक-भय-स्मयाः।
न राग-द्वेष-मोहाश्च, यस्याप्तः स प्रकीर्त्यते।।6।।

अन्वयार्थ- **(यस्य)** जिसके **(क्षुत्)** भूख **(पिपासा)** प्यास **(जरा)** बुढ़ापा **(आतङ्क)** रोग **(जन्म)** जन्म **(अन्तक)** मरण **(भय)** भय **(स्मयाः)** गर्व **(रागद्वेष)** राग-द्वेष **(मोहाः)** मोह **(च)** और (आश्चर्य, अरति, खेद, शोक, निद्रा, चिन्ता तथा स्वेद) **(न)** नहीं होते हैं **(सः)** वह **(आप्तः)** वीतराग **(प्रकीर्त्यते)** कहा जाता है।

भावार्थ- जिसके भूख, प्यास, बुढ़ापा, रोग, जन्म, मरण, भय, गर्व, राग, द्वेष, मोह और आश्चर्य, अरति, खेद, शोक, निद्रा, चिन्ता तथा स्वेद, नहीं होते वे वीतराग कहे जाते हैं।

''हितोपदेशी का लक्षण''

परमेष्ठी परंज्योति, र्विरागो विमलः कृती।
सर्वज्ञोऽनादि-मध्यान्तः, सार्वः शास्तोपलाल्यते।।7।।

अन्वयार्थ- **(परमेष्ठी)** जो परमपद में स्थित है **(परंज्योतिः)** केवलज्ञान सहित **(विरागो)** रागादि भाव कर्म से रहित **(विमलः)** घातिया कर्म रूप द्रव्यकर्म रहित **(कृती)** कृतकृत्य **(सर्वज्ञः)** सर्वज्ञ **(अनादि मध्यान्तः)** आदि, मध्य, अन्त से रहित (और) **(सार्वः)** समस्त जीवों का हितकारक होता है **(शास्ता)** हितोपदेशी **(सः)** वह **(उपलाल्यते)** कहलाता है।

भावार्थ- जो परमपद पर स्थित है, केवलज्ञान से युक्त है और रागादिक भाव कर्म रहित घातिया कर्म रूप द्रव्य कर्म रहित, कृतकृत्य, आदि, मध्य, अन्त से रहित हैं और समस्त जीवों के हितकारक हैं वह शास्ता (हितोपदेशी) है।

"वीतराग देव के उपदेश में राग का अभाव"

अनात्मार्थं विना रागैः, शास्ता शास्ति सतो हितम्।
ध्वनन् शिल्पि-करस्पर्शान्, मुरजः किं मपेक्षते।।8।।

अन्वयार्थ- **(शास्ता)** हितोपदेशी **(अनात्मार्थं)** आत्मीय प्रयोजन बिना **(रागैः विना)** राग-द्वेष बिना **(सतो)** भव्य जीवों को **(हितम्)** हितकारक **(शास्ति)** उपदेश देते हैं (जैसे) **(शिल्पि)** बढ़ई के (बजाने वाले के) **(कर स्पर्शान्)** हाथ के स्पर्श से **(ध्वनन्)** बजाता हुआ **(मुरजः)** मृदंग **(किम्)** क्या **(अपेक्षते)** चाहता है? अर्थात् कुछ नहीं चाहता।

भावार्थ- हितोपदेशी इच्छा रहित राग-द्वेष आदि के बिना भव्य जीवों को हितकारक उपदेश देता है, जैसे बजाने वाले के हाथ के स्पर्श से बजता हुआ मृदंग क्या चाहता है? अर्थात् कुछ भी नहीं चाहता।

"सच्चे शास्त्र का लक्षण"

आप्तो पज्ञ-मनुल्लङ्घ्य, मदृष्टेष्ट विरोधकम्।
तत्त्वोप देश कृत्सार्वं, शास्त्रं कापथ-घट्टनम्।।9।।

अन्वयार्थ- **(आप्तोपज्ञं)** सच्चे देव का कहा हुआ **(अनुल्लङ्घ्यम्)** खण्डन रहित **(अदृष्ट)** प्रत्यक्ष **(इष्टविरोधकम्)** अनुमान आदि प्रमाणों के विरोध रहित **(तत्त्वोपदेश)** सातों तत्वों का उपदेश **(कृत्)** करने वाला **(सार्वम्)** सब जीवों का हितकारक और **(कापथ)** मिथ्या आदि कुमार्ग का **(घट्टनम्)** खण्डन करने वाला **(शास्त्रं)** सच्चा शास्त्र है।

भावार्थ- जो वीतराग देव द्वारा कहा गया है खण्डन रहित अर्थात् अनुलंघनीय है। प्रत्यक्ष और अनुमान आदि प्रमाणों के विरोध से रहित है, वस्तु स्वरूप का प्रतिपादक है, सब जीवों का हितकारक है और मिथ्यात्व को नष्ट करने वाला है, वह सच्चा शास्त्र है।

"सच्चे गुरु का लक्षण"

विषयाशा-वशा-तीतो, निरारम्भोऽपरिग्रहः।
ज्ञान-ध्यान-तपोरक्तः, तपस्वी सः प्रशस्यते।।10।।

अन्वयार्थ- **(विषयाशा)** विषय की चाह के **(वशातीतो)** वश से रहित **(निरारम्भाः)** आरम्भ से रहित **(अपरिग्रहः)** परिग्रह रहित और **(ज्ञान-ध्यान)** ज्ञान-ध्यान तथा **(तपो)** तप में **(रक्तः)** लवलीन है **(सः)** वे **(तपस्वी)** सच्चे गुरु **(प्रशस्यते)** प्रशंसनीय (कहलाते) हैं।

भावार्थ- जो पाँचों इन्द्रियों के विषयों की आशा से रहित हैं, आरम्भ परिग्रह से रहित हैं और ज्ञान, ध्यान, तप में लीन रहते हैं, वे सच्चे गुरु हैं।

''निःशंकित अंग का लक्षण''

इदमेवे दृशमेव, तत्त्वं नान्यन्न चान्यथा।
इत्यकम्पाय साम्भोवत्, सन्मार्गेऽसंशया रुचिः।।11।।

अन्वयार्थ- **(तत्त्वं)** तत्त्व (परमार्थ स्वरूप) **(इदं)** यह **(एव)** ही है **(ईदृशम्)** इस प्रकार **(एव)** ही है **(अन्यत्)** अन्य **(न)** नहीं है (और) **(अन्यथा)** अन्य प्रकार भी **(न)** नहीं है **(इति)** इसी प्रकार **(सन्मार्गे)** सच्चे देव-शास्त्र-गुरु के विषय में **(आयसाम्भोवत्)** तलवार की धार पर रखे हुए पानी के समान **(अकंपा)** अटल **(रुचिः)** श्रद्धान **(असंशया)** निःशंकित अंग कहलाता है।

भावार्थ- परमार्थ स्वरूप तत्त्व का लक्षण यह ही है, इस प्रकार ही है, और नहीं है, अन्य किसी प्रकार भी नहीं है-इस प्रकार (सच्चे देव, शास्त्र, गुरु के विषय में) तलवार की धार पर रखे हुए पानी के समान अटल श्रद्धान निःशंकित अंग कहलाता है।

''निःकांक्षित अंग का लक्षण''

कर्म-परवशे सान्ते, दुःखै-रन्त-रितोदये।
पापबीजे सुखेऽनास्था, श्रद्धाना काङ्क्षणा स्मृता।।12।।

अन्वयार्थ- **(कर्म)** कर्मों के **(परवशे)** अधीन **(सान्ते)** नश्वर **(दुःखैः)** दुःखों से **(अन्तरितोदये)** मिश्रित और **(पाप बीजे)** पाप के कारण **(सुखे)** इन्द्रिय संबंधी सुख में **(अनास्था)** इच्छा रहित **(श्रद्धा)** श्रद्धान (**अनाकाङ्क्षणा**) निःकांक्षित अंग **(स्मृता)** कहलाता है।

भावार्थ- कर्म के अधीन शारीरिक और मानसिक दु:खों से मिश्रित पाप के कारण इन्द्रिय संबंधी सुखों में अनित्य रूप श्रद्धान नि:कांक्षित अंग कहलाता है।

''निर्विचिकित्सा अंग का लक्षण''

स्वभावतोऽशुचौ काये, रत्नत्रय-पवित्रिते।
निर्जुगुप्सा गुण प्रीति, र्मता निर्विचिकित्सता।।13।।

अन्वयार्थ- **(स्वभावत:)** स्वरूप (स्वभाव) से **(अशुचौ)** अपवित्र किन्तु **(रत्नत्रय)** रत्नत्रय से **(पवित्रिते)** पवित्र **(काये)** शरीर में **(निर्जुगुप्सा)** ग्लानि रहित **(गुण प्रीति:)** गुणों में प्रेम करना **(मता)** माना गया है **(निर्विचिकित्सता)** निर्विचिकित्सता अंग।

भावार्थ- स्वरूप (स्वभाव) से अपवित्र किन्तु रत्नत्रय से पवित्र शरीर में ग्लानि रहित गुणों में प्रेम करना निर्विचिकित्सा अंग कहलाता है।

''अमूढ़ दृष्टि अंग का लक्षण''

कापथे पथि दु:खानां, कापथस्थेऽप्य-सम्मति:।
असम्पृक्ति-रनुत्कीर्ति, रमूढ़ा-दृष्टि-रुच्यते।।14।।

अन्वयार्थ- **(दु:खानां)** दुखों के **(पथि)** कारण **(कापथे)** मिथ्यात्व आदि के विषय में **(अपि)** और भी **(कापथस्थे)** मिथ्यात्व आदि के धारक व्यक्ति के विषय में **(असम्मति:)** मन से सहमत न होना **(असम्पृक्ति:)** शरीर से सराहना नहीं करना **(अनुत्कीर्ति:)** वचन से प्रशंसा नहीं करना **(अमूढ़ दृष्टि:)** अमूढ़ दृष्टि अंग **(उच्यते)** कहा जाता है।

भावार्थ- दु:खों के कारण भूत मिथ्यात्व आदि के विषय में और मिथ्यात्व आदि के धारक व्यक्ति के विषय में मन से सहमत नहीं होना, शरीर से सराहना नहीं करना, वचन से प्रशंसा नहीं करना अमूढ़दृष्टि अंग कहलाता है।

''उपगूहन अंग का लक्षण''

स्वयं शुद्धस्य मार्गस्य, बालाशक्त-जनाश्रयाम्।
वाच्यतां यत्प्रमार्जन्ति, तद्-वदन्त्युपगूहनम्।।15।।

अन्वयार्थ- **(स्वयं)** स्वरूप से **(शुद्धस्य)** पवित्र **(मार्गस्य)** मोक्षमार्ग

की **(बालाशक्त)** अज्ञानी और असमर्थ **(जनाश्रयाम्)** पुरुषों के द्वारा उत्पन्न हुई **(वाच्यतां)** निन्दा को **(यत्)** जो **(प्रमार्जन्ति)** छिपाते हैं **(तत्)** उस को **(उपगूहनम्)** उपगूहन अंग **(वदन्ति)** कहते है।

भावार्थ- स्वरूप से पवित्र मोक्षमार्ग की अज्ञानी और असमर्थ पुरुषों के द्वारा उत्पन्न हुई निन्दा को छिपाना उपगूहन अंग कहलाता है।

''स्थितिकरण अंग का लक्षण''

दर्शनाच् चरणाद् वापि, चलतां धर्म-वत्सलैः।
प्रत्यवस्थापनं प्राज्ञैःस्थितिकरण मुच्यते।।16।।

अन्वयार्थ- **(दर्शनात्)** दर्शन से **(वा)** अथवा **(चरणात्)** सम्यक्चारित्र से **(अपि)** भी **(चलतां)** डिगते हुए जीवों को **(धर्म वत्सलैः)** धर्म से प्रेम रखने वाले जीव के द्वारा **(प्रत्यवस्थापनं)** फिर से उसी में लगा देना **(प्राज्ञैः)** विद्वानों के द्वारा **(स्थितिकरणं)** स्थितिकरण अंग **(उच्यते)** कहा जाता है।

भावार्थ- सम्यग्दर्शन से अथवा सम्यक्चारित्र से भी डिगते हुए जीवों को धर्म से प्रेम रखने वाले जीवों के द्वारा फिर से उसी में लगा देना विद्वानों के द्वारा स्थितिकरण अंग कहा जाता है।

''वात्सल्य अंग का लक्षण''

स्वयूथ्यान प्रति सद्भाव, सनाथा पेत कैतवा।
प्रति-पत्ति र्यथा-योग्यंवात्सल्य-मभि-लप्यते।।17।।

अन्वयार्थ- **(स्वयूथ्यान)** अपने साधर्मियों के **(प्रति)** प्रति **(सद्भावसनाथा)** अच्छे भाव (सरलता) सहित **(अपेतकैतवा)** मायाचारी से रहित **(यथा योग्यं)** यथायोग्य **(प्रतिपत्तिः)** आदर-सत्कार आदि करना **(वात्सल्यं)** वात्सल्यअंग **(अभिलप्यते)** कहा जाता है।

भावार्थ- अपने साधर्मियों के प्रति सरलता सहित, मायाचारी रहित, यथायोग्य आदर-सत्कार आदि करना वात्सल्य अंग कहा जाता है।

''प्रभावना अंग का लक्षण''

अज्ञान-तिमिर-व्याप्ति, मपाकृत्य यथायथम्।
जिन-शासन-महात्म्य, प्रकाशः स्यात् प्रभावना।।18।।

अन्वयार्थ- **(यथा यथम्)** जैसे-तैसे (समुचित रीति से) **(अज्ञान तिमिर)** अज्ञान रूपी अंधकार के **(व्याप्तिम्)** विस्तार को **(अपाकृत्य)** हटाकर **(जिन शासन)** जैन धर्म की **(महात्म्य)** महिमा को **(प्रकाशः)** फैलाना **(प्रभावना)** प्रभावना अंग (**स्यात्**) होता है।

भावार्थ- समुचित रीति से अज्ञान रूपी अंधकार के विस्तार को हटाकर (दूर करके) जिनशासन की महिमा को प्रगट करना (फैलाना) प्रभावना अंग कहलाता है।

''आठ अंगों में प्रसिद्ध व्यक्ति''

तावदञ्जन-चौरोऽङ्गे, ततोऽनन्त-मती स्मृता।
उद्दायनस्तृतीयेऽपि, तुरीये रेवती मता।।19।।
ततो जिनेन्द्र-भक्तोऽन्यो, वारि षेणस्ततः परः।
विष्णुश्च वज्र-नामा च, शेषयो र्लक्ष्यतां गतौ।।20।।

अन्वयार्थ- **(तावत्)** क्रम से पहले **(अंगे)** अंग में **(अंजनचौरः)** अंजन चोर प्रसिद्ध हुआ है **(ततः)** दूसरे में **(अनंतमती)** अनंतमति रानी **(स्मृता)** प्रसिद्ध हुई है **(तृतीये)** तीसरे अंग में **(उद्दयानः)** उद्दायन राजा हुआ है **(तुरीये)** चौथे अंग में **(रेवती)** रेवती रानी **(मता)** मानी गई है **(ततः)** पाँचवे **(उपगूहन)** अंग में **(जिनेन्द्र भक्तः)** जिनेन्द्र भक्त सेठ प्रसिद्ध हुआ है **(अन्यः)** अन्य (**ततः**) उसके बाद (छठे अंग में) **(वारिषेण)** वारिषेण राजा **(परः)** प्रसिद्ध हुआ है **(च)** और **(शेषयोः)** शेष दो अंगों (वात्सल्य व प्रभावना) में क्रम से **(विष्णुः)** विष्णुकुमार मुनि **(च)** और **(व्रजनामा)** वज्र कुमार मुनि **(लक्ष्यताम्)** प्रसिद्धि को **(गतौ)** प्राप्त हुए हैं।

भावार्थ- क्रम से पहिले निःशंकित अंग में अंजन चोर, दूसरे निःकांक्षित अंग में अनन्तमति रानी, तीसरे निर्विचिकित्सा अंग में उद्‌दायन राजा, चौथे अमूढ़दृष्टि अंग में रेवती रानी, पाँचवे उपगूहन अंग में जिनेन्द्र भक्त सेठ, छठे स्थितिकरण में श्रेणिक राजा का पुत्र वारिषेण, सातवें वात्सल्य अंग में विष्णुकुमार मुनि और आठवें प्रभावना अंग में वज्रकुमार मुनि प्रसिद्ध हुए हैं।

''अंग हीन सम्यग्दर्शन की स्थिति''

नाङ्ग-हीन-मलं छेत्तुं, दर्शनं जन्म सन्ततिम्।
न हि मन्त्रोऽक्षरन्यूनो, निहन्ति विष वेदनाम्।।21।।

अन्वयार्थ- जैसे **(अक्षर न्यूनो)** अक्षर से न्यून **(मन्त्रः)** मन्त्र **(विष वेदनाम्)** विष की पीड़ा को **(न निहन्ति)** नष्ट नहीं करता उसी प्रकार **(अंगहीनं)** अंगहीन **(दर्शनं)** सम्यग्दर्शन **(जन्म सन्ततिम्)** जन्मों की परंपरा को **(छेत्तुं)** नष्ट करने को **(अलं)** समर्थ **(न)** नहीं होता है।

भावार्थ- जैसे अक्षर हीन मंत्र विष की पीड़ा को नष्ट नहीं करता, उसी प्रकार अंगहीन सम्यग्दर्शन जन्मों की परम्परा को नष्ट करने में समर्थ नहीं होता है।

''लोक मूढ़ता का लक्षण''

आपगा-सागर-स्नान, मुच्चयःसिक ताश्मनाम्।
गिरि-पातोऽग्नि पातश्च, लोक मूढं निगद्यते।।22।।

अन्वयार्थ-**(आपगासागर)** नदी और समुद्र में **(स्नानं)** स्नान करना **(सिक ताश्मनाम्)** बालू और पत्थर का **(उच्चयः)** ढेर लगाना **(गिरिपातः)** पर्वत से गिरना **(च)** और **(अग्निपातः)** अग्नि में जलना **(लोकमूढं)** लोक मूढ़ता **(निगद्यते)** कही जाती है।

भावार्थ- नदी और समुद्र में स्नान करना, बालू और पत्थरों का ढेर लगाना, पर्वत से गिरना और अग्नि में जलना (कूदना) लोक मूढ़ता है।

''देव मूढ़ता का लक्षण''

वरोप लिप्सयाशावान्, राग-द्वेष मली मसाः।
देवता यदुपासीत, देवता-मूढ़-मुच्चते।।23।।

अन्वयार्थ- **(आशावान्)** लौकिक फल की इच्छा करने वाला प्राणी **(वरोपलिप्सयाश)** वर की इच्छा से **(यत्)** जो **(राग-द्वेष)** राग-द्वेष से **(मलीमसाः)** मलीन **(देवता)** देवताओं को **(उपासीत)** पूजता है **(तत)** वह **(देवता मूढं)** देव मूढ़ता **(उच्चते)** कही जाती है।

भावार्थ-लौकिक फल की आशा से, वर की इच्छा से, राग-द्वेष से

मलिन देवताओं की जो उपासना की जाती है वह देव मूढ़ता कही जाती है।

"गुरु मूढ़ता का लक्षण"

सग्रन्थाऽरम्भ-हिंसानां, संसारा वर्त-वर्तिनाम्।
पाषण्डिनां पुरस्कारो, ज्ञेयं पाषण्डि-मोहनम्।।24।।

अन्वयार्थ- **(सग्रन्थ)** परिग्रह **(आरम्भ)** आरंभ **(हिंसानां)** हिंसा सहित **(संसारावर्त)** संसार रूपी चक्र में **(वर्तिनाम्)** भटकने वाले **(पाषण्डिनां)** पाखण्डी साधुओं का **(पुरस्कारः)** आदर, सम्मान करना **(पाषण्डि-मोहनम्)** गुरु मूढ़ता **(ज्ञेयं)** जानना चाहिये।

भावार्थ- परिग्रह, आरम्भ और हिंसा सहित संसार रूपी चक्र में भटकने वाले पाखण्डी साधुओं का आदर, सम्मान, पूजा आदि करना गुरु मूढ़ता जानना चाहिये।

"मद का लक्षण और भेद"

ज्ञानं पूजां कुलं जातिं, बलमृद्धिं तपो वपुः।
अष्टा-वाश्रित्य मानित्वं, स्मय-माहु र्गतस्मयाः।।25।।

अन्वयार्थ- **(ज्ञानं)** ज्ञान **(पूजां)** प्रतिष्ठा **(कुलं)** कुल **(जातिं)** जाति **(बलं)** बल **(ऋद्धिं)** धन सम्पत्ति **(तपः)** तप और **(वपुः)** शरीर **(अष्टौ)** इन आठों को **(आश्रित्य)** निमित्त करके **(मानित्वं)** घमण्ड करने को **(गतस्मयाः)** गर्व रहित जिनेन्द्र देव **(स्मयं)** मद **(आहुः)** कहते हैं।

भावार्थ- ज्ञान, पूजा, कुल, जाति, बल, ऋद्धि, तप और शरीर इन आठों को आश्रय लेकर जो गर्व करता है मद रहित पुरुष (सर्वज्ञ भगवान) उसे मद कहते हैं।

"मद से हानि"

स्मयेन योऽन्यानत्येति, धर्मस्थान गर्विता शयः।
सोऽत्येति धर्म-मात्मीयं, न धर्मो धार्मिकैर्विना।।26।।

अन्वयार्थ- **(यः)** जो **(गर्विताशयः)** घमण्डी **(स्मयेन)** घमण्ड से **(अन्यान्)** दूसरे **(धर्म स्थान)** रत्नत्रय के धारक धर्मात्मा जनों को **(अत्येति)**

अपमानित करता है **(सः)** वह व्यक्ति **(आत्मीयं)** अपने **(धर्मं)** धर्म को (एव) ही (**अत्येति**) अपमानित करता है क्योंकि **(धार्मिकैर्विना)** धर्मात्माओं के बिना **(धर्मों)** धर्म **(न)** नहीं होता।

भावार्थ- जो घमण्डी घमण्ड से दूसरे रत्नत्रय के धारक धर्मात्मा जनों को अपमानित करता है, वह व्यक्ति अपने धर्म को ही अपमानित करता है, क्योंकि धर्मात्माओं के बिना धर्म नहीं होता है।

''सम्पदा से क्या प्रयोजन''

यदिपाप-निरोधोऽन्य, सम्पदा किं प्रयोजनम्।
अथ पापास्रवोऽस्त्यन्य, सम्पदा किं प्रयोजनम्।।27।।

अन्वयार्थ- **(यदि)** अगर **(पाप निरोधः)** पाप का निरोध हो गया हो तो **(अन्यसम्पदा)** दूसरी संपदाओं से **(किं)** क्या **(प्रयोजनम्)** प्रयोजन है (मतलब है) **(अथ)** यदि **(पापास्रवः)** पाप का आस्रव **(अस्ति)** है तो **(अन्य सम्पदा)** दूसरी संपदाओं से **(किं)** क्या **(प्रयोजनम्)** मतलब है।

भावार्थ- यदि पाप का निरोध हो गया है तो अन्य सम्पदा से क्या प्रयोजन है, यदि पाप का आस्रव है तो दूसरी सम्पदाओं से क्या प्रयोजन है।

''सम्यग्दर्शन की विशेषता''

सम्यग्दर्शन-सम्पन्न, मपि मातङ्ग-देहजम्।
देवादेवं विदुर्भस्म, गूढाङ्गारान्त-रौजसम्।।28।।

अन्वयार्थ- **(देवा)** जिनेन्द्र देव **(सम्यग्दर्शन सम्पन्न)** सम्यग्दर्शन से सहित **(मातङ्ग देहजम्)** भंगी के शरीर (जमादार), **(अपि)** भी **(भस्म)** राख के **(गूढाङ्गारान्त)** भीतर ढके हुए अंगार के भीतरी **(औजसम्)** प्रकाश के समान **(देवं)** पूज्य **(विदुः)** कहते हैं।

भावार्थ-जिनेन्द्र देव सम्यग्दर्शन सहित भंगी (जमादार) को भी राख के भीतर ढके हुए अंगार के भीतरी प्रकाश के समान पूज्य (श्रेष्ठ) कहते हैं।

''धर्म और पाप का फल''

श्वापि देवोऽपि देवः श्वाः, जायते धर्म किल्विषात्।
काऽपि नाम भवेदन्या, सम्पद्-धर्माच्छरीरिणाम्।।29।।

अन्वयार्थ- **(धर्म)** धर्म और **(किल्विषात्)** पाप से **(श्वाः)** कुत्ता **(अपि)** भी **(देवः)** देव (और) **(देवः)** देव **(अपि)** भी **(श्वाः)** कुत्ता **(जायते)** हो जाता है और **(शरीरिणाम्)** जीवों के **(धर्मात्)** धर्म से **(काऽपि नाम अन्या)** कोई अपूर्व अन्य भी अनिर्वचनीय (मोक्षादि) **(सम्पत्)** संपदा **(भवेत्)** प्राप्त होती है।

भावार्थ- धर्म के प्रभाव से कुत्ता भी देव हो जाता है और पाप के कारण देव भी कुत्ता हो जाता है धर्म के प्रभाव से जीवों को अन्य भी अनिर्वचनीय (अहमिन्द्र, मोक्षादि) सम्पदा प्राप्त होती है।

''सम्यग्दृष्टि के कुदेवादि की विनयादिक का निषेध''

भयाशा स्नेह लोभाच्च, कुदेवागम लिङ्गिनाम्।
प्रणामं विनयं चैव, न कुर्युः शुद्ध-दृष्टयः।।30।।

अन्वयार्थ- **(शुद्ध दृष्टयः)** शुद्ध सम्यग्दृष्टि जीव **(भयाशा)** भय, आशा **(स्नेह)** स्नेह **(लोभात्)** लोभ से भी **(कुदेवागम)** कुदेव, कुशास्त्र और **(लिङ्गिनाम्)** कुगुरुओं को **(प्रणामं)** नमस्कार **(च)** और **(विनयं)** विनय **(एव)** भी (ही) **(न कुर्युः)** नहीं करे।

भावार्थ- शुद्ध सम्यग्दृष्टि जीव भय, आशा, प्रेम और लोभ के वशीभूत होकर कुदेव, कुशास्त्र, कुगुरुओं को नमस्कार विनय आदि भी नहीं करें।

''मोक्षमार्ग में सम्यग्दर्शन की प्रधानता''

दर्शनं ज्ञानचारित्रात्, साधिमान-मुपाश्नुते।
दर्शनं कर्णधारं, तन्मोक्षमार्गे प्रचक्षते।।31।।

अन्वयार्थ-**(ज्ञान चारित्रात्)** ज्ञान-चारित्र की अपेक्षा **(दर्शनं)** सम्यग्दर्शन **(साधिमानं)** उत्कृष्टपने को **(उपाश्नुते)** प्राप्त होता है **(तत्)** वह **(दर्शनं)** सम्यग्दर्शन **(मोक्षमार्गे)** मोक्षमार्ग में **(कर्णधारं)** खेवटिया के समान **(प्रचक्षते)** कहा गया है।

भावार्थ-सम्यग्ज्ञान और चारित्र की अपेक्षा सम्यग्दर्शन उत्कृष्टपने को प्राप्त होता है इसलिये सम्यग्दर्शन को मोक्षमार्ग में खेवटिया के समान कहा जाता है।

''मोक्षमार्ग में सम्यग्दर्शन की प्रधानता का कारण''

विद्या-वृत्तस्य संभूति, स्थिति-वृद्धि-फलोदयाः।
न सन्त्य-सति सम्यक्त्वे, बीजाभावे तरोरिव।।32।।

अन्वयार्थ- **(बीजाभावे)** बीज के अभाव में **(तरोरिव)** वृक्ष के समान **(सम्यक्त्वे)** सम्यग्दर्शन के **(असति)** न होने पर **(विद्या वृत्तस्य)** सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र की **(संभूति)** उत्पत्ति **(स्थिति वृद्धि)** स्थिति, वृद्धि तथा **(फलोदयाः)** फल की प्राप्ति **(न सन्ति)** नहीं होती है।

भावार्थ- जिस तरह बीज के न होने पर वृक्ष की उत्पत्ति, स्थिति, वृद्धि और फल की सम्वृद्धि नहीं बनती उसी प्रकार सम्यक्दर्शन के न होने पर सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र की उत्पत्ति, वृद्धि और फलों की सम्वृद्धि नहीं बनती।

''सम्यग्दर्शन का प्रभाव''

गृहस्थो मोक्ष-मार्गस्थो, निर्मोहो नैव मोहवान्।
अनगारो गृही श्रेयान्, निर्मोहो मोहिनो मुनेः।।33।।

अन्वयार्थ- **(निर्मोहो)** मोह रहित **(गृहस्थो)** गृहस्थ **(मोक्षमार्गस्थो)** मोक्षमार्ग में स्थित है किन्तु **(मोहवान्)** मोह सहित **(अनगारः)** मुनि **(नैव)** (मोक्षमार्ग में स्थित) नहीं है (इसलिये) **(मोहिनो)** मिथ्यादृष्टि **(मुनेः)** मुनी से **(गृही)** गृहस्थ **(श्रेयान्)** श्रेष्ठ है।

भावार्थ- दर्शन मोह रहित सम्यग्दृष्टि गृहस्थ मोक्षमार्ग में स्थित है किन्तु दर्शन मोह सहित द्रव्यलिंगी मुनि मोक्षमार्ग में स्थित नहीं है इस कारण से द्रव्यलिंगी मुनि से दर्शन मोह रहित गृहस्थ श्रेष्ठ है।

''सम्यग्दर्शन उत्कृष्ट क्यों है''

न सम्यक्त्व-समं किंचित्, त्रैकाल्ये त्रिजगत्यपि।
श्रेयोऽश्रेयश्च मिथ्यात्व, समं नान्यत्तनू-भृताम्।।34।।

अन्वयार्थ- **(त्रैकाल्ये)** तीनों काल मे **(च)** और **(त्रिजगति)** तीन जगत में **(तनूभृताम्)** संसारी जीवों को **(सम्यक्त्वसमं)** सम्यक्त्व के समान **(अन्यत्)** दूसरा **(किंचित्)** कुछ **(अपि)** भी (**श्रेयःन**) कल्याणकारी नहीं हैं (**च**) और (**मिथ्यात्व समं**) मिथ्यात्व के समान (**अन्यात्**) दूसरा **(किंचित)**

कुछ (**अपि**) भी **(अश्रेयः न)** अकल्याणकारी नहीं है।

भावार्थ- तीनों कालों में तीनों लोकों में जीव को सम्यक्त्व के समान कोई दूसरा उपकारक नहीं है। और मिथ्यात्व के समान कोई दूसरा अनुपकारक (अहित रूप) नहीं है।

''सम्यग्दृष्टि की उत्पत्ति का निषेध''

सम्यग्दर्शन शुद्धा, नारक तिर्यङ्-नपुंसक-स्त्रीत्वानि।
दुष्कुल विकृताऽल्पायु र्दरिद्रतां च व्रजन्ति नाऽप्यव्रतिकाः।।35।।

अन्वयार्थ- **(सम्यग्दर्शन शुद्धा)** सम्यग्दर्शन से शुद्ध जीव **(अव्रतिकाः)** व्रत रहित होने पर **(अपि)** भी **(नारकतिर्यङ्)** नारकी, तिर्यंच **(नपुंसक स्त्री त्वानि)** नपुंसक और स्त्री पर्याय को **(च)** और **(दुष्कुल)** नीच कुल **(विकृत)** विकल अंग **(अल्पायुः)** अल्प आयु और **(दरिद्रतां)** दरिद्रपने को **(न)** नहीं **(व्रजन्ति)** प्राप्त होते हैं।

भावार्थ- व्रत रहित भी शुद्ध सम्यग्दृष्टि जीव नारकी, तिर्यंच, नपुंसक और स्त्रीपने को प्राप्त नहीं होते और निन्द्य कुल, विकलांगता, अल्पायु और दरिद्रता को प्राप्त नहीं होते।

''सम्यग्दृष्टि मरने पर कहां उत्पन्न होते है?''

ओजस्तेजो-विद्या, वीर्य्ययशो वृद्धि-विजय-विभव-सनाथाः।
महाकुला-महार्था, मानव-तिलका भवन्ति दर्शन-पूताः।।36।।

अन्वयार्थ- **(दर्शन पूताः)** सम्यग्दर्शन से पवित्र जीव **(ओजस्तेजो)** कान्ति, प्रताप **(विद्यावीर्य्य)** विद्या, पराक्रम **(यशः वृद्धि)** कीर्ति, कुल वृद्धि **(विजय)** विजय **(विभव सनाथाः)** सम्पत्ति के स्वामी **(महाकुला)** महान कुल वाले **(महार्था)** महान पुरुषार्थों के साधक तथा **(मानव तिलका)** मनुष्यों में शिरोमणि **(भवन्ति)** होते हैं।

भावार्थ- शुद्ध सम्यग्दृष्टि जीव, ओज, कान्ति, विद्या, बल, कीर्ति, उन्नति, विजय और सम्पत्ति के स्वामी, उच्चकुली और मनुष्यों में शिरोमणी होते हैं।

"सम्यग्दृष्टि की विशेषता"

अष्ट-गुण-पुष्टि-तुष्टा, दृष्टि-विशिष्टाः प्रकृष्ट-शोभा-जुष्टाः।
अमराप्सरसां परिषदि, चिरं रमन्ते जिनेन्द्र-भक्ताः स्वर्गे।।37।।

अन्वयार्थ- **(दृष्टि विशिष्टाः)** सम्यग्दृष्टि जीव **(जिनेन्द्र भक्ताः)** जिनेन्द्र देव के भक्त **(स्वर्गे)** स्वर्ग में **(अष्ट गुण पुष्टि तुष्टा)** अणिमा आदि आठ गुणों से संतुष्ट दिव्य शरीर से पुष्ट तथा **(प्रकृष्ट शोभा जुष्टाः)** अतिशय शोभा से युक्त होकर **(अमर)** देव (तथा) **(अप्सरसां)** देवांगनाओं की **(परिषदि)** सभा में **(चिरं)** चिरकाल तक **(रमन्ते)** रमण करते हैं।

भावार्थ- शुद्ध सम्यग्दृष्टि जीव भगवान जिनेन्द्र के भक्त होते हुए स्वर्ग में अष्ट ऋद्धियों की पूर्णता से संतुष्ट और विशेष सुंदरता सहित होते हुए देवों और अप्सराओं की सभा में चिरकाल तक रमण करते हैं।

"सम्यग्दृष्टि चक्रवर्ती होते हैं"

नव-निधि-सप्त-द्वय-रत्ना-धीशाः सर्व भूमि पतयश्चक्रम।
वर्तयितुं प्रभवन्ति, स्पष्ट-दृशः क्षत्र-मौलिशेखर-चरणाः।।38।।

अन्वयार्थ- **(स्पष्ट दृशः)** सम्यग्दृष्टि जीव **(सर्व भूमिपतयः)** षट्खण्ड पृथ्वी के अधिपति होकर **(चक्रम्)** चक्र रत्न **(वर्तयितुं)** प्रवर्ताने को **(प्रभवन्ति)** समर्थ होते हैं (कैसे हैं चक्रवर्ती) **(नवनिधि)** नवनिधि **(सप्तद्वय)** चौदह **(रत्नाधीशाः)** रत्नों के स्वामी होते हैं **(क्षत्र मौलिशेखर चरणाः)** क्षत्रिय राजाओं के मुकुट शिखर उनके चरणों में झुकते हैं।

भावार्थ- शुद्ध सम्यग्दृष्टि जीव अनेकानेक मुकुटबद्ध राजाओं के सेवनीय नवनिधि और चौदह रत्नों के स्वामी समस्त छः खण्डों के स्वामी होते हुए चक्ररत्न को प्रर्वताने (चलाने) में समर्थ होते हैं।

"सम्यग्दृष्टि ही तीर्थंकर होते हैं?"

अमरासुर-नर-पतिभि, र्यमधर-पतिभिश्च नूतपादाम्भोजाः।
दृष्टया सुनिश्चितार्था, वृष-चक्रधरा भवन्ति लोकशरण्याः।।39।।

अन्वयार्थ- **(सुनिश्चितार्था)** जीवादि तत्त्व का दृढ़ निश्चय करने

वाले सम्यग्दृष्टि जीव **(दृष्टया)** सम्यक्त्व के प्रभाव से **(अमरासुर)** देवेन्द्र धरणेन्द्र **(नरपतिभिः)** नरेन्द्रों के द्वारा **(च)** और **(यमधर पतिभिः)** गणधरों के द्वारा **(नूतपादाम्भोजाः)** नमस्कार किये गये चरण कमल जिनके ऐसे **(लोक शरण्याः)** तीन लोक के जीवो के शरणभूत **(वृषचक्र धरा)** घर्म चक्र के धारक (तीर्थंकर) **(भवन्ति)** होते हैं।

भावार्थ-जिन्होंने अनेकान्त दृष्टि से तत्त्व (अर्थ) का भलीभाँति निश्चय किया है ऐसे सम्यग्दृष्टि जीव देवेन्द्र, धरणेन्द्र, चक्रवर्ती और गणधरों से पूजनीय हैं चरण कमल जिनके ऐसे तीनों लोकों के शरण भूत धर्मचक्र के धारक तीर्थंकर होते हैं।

''सम्यग्दृष्टि जीव ही मोक्ष पद पाते हैं।''

शिव-मजर-मरुज-मक्षय, मव्याबाधंविशोक-भय शंकम्।
काष्ठा गत सुख विद्या-विभवं विमलं भजन्ति दर्शन शरणाः।।40।।

अन्वयार्थ- (दर्शन शरणाः) सम्यग्दर्शन की शरण लेने वाले जीव **(अजरं)** वृद्धावस्था रहित **(अरुजं)** रोग रहित **(अक्षयं)** विनाश रहित **(अव्याबाधं)** बाधारहित **(विशोक भय शंकम्)** शोक भय व शंका से रहित **(काष्ठ गत सुख विद्या विभवं)** अनंत सुख व अनंतज्ञान के वैभव से युक्त **(विमलं)** कर्ममल रहित **(शिवं)** मोक्ष पद को **(भजन्ति)** प्राप्त होते हैं।

भावार्थ- सम्यग्दृष्टि जीव बुढ़ापा रहित, रोग रहित, क्षय रहित, बाधा रहित, शोक, भय और शंका से रहित, अनंत सुख तथा अनंत ज्ञान सहित और द्रव्यकर्म, भावकर्म, नोकर्म रहित मोक्ष को भी प्राप्त करते हैं।

सम्यग्दृष्टि की उत्पत्ति के स्थानों पर उपसंहार

देवेन्द्र-चक्र-महिमान-ममेय-मानं,
राजेन्द्र-चक्र-मवनीन्द्र शिरोऽर्चनीयम्।
धर्मेन्द्रचक्रमधरी कृत सर्व लोकं,
लब्ध्वा शिवं च जिन भक्ति-रुपैति भव्यः।।41।।

अन्वयार्थ- (जिन भक्तिः) जिनेन्द्र देव की भक्ति करने वाला **(भव्यः)**

भव्य जीव **(अमेयमानं)** अपरिमित **(देवेन्द्र चक्र)** देवेन्द्र समूह की **(महिमानम्)** महिमा को **(अवनीन्द्र)** राजाओं के **(शिरः)** मस्तक से **(अर्चनीयम्)** पूजनीय **(राजेन्द्र)** राजाओं के इन्द्र चक्रवर्ती के (**चक्रम**) **चक्र को (अधरीकृत) नम्रीभूत क्रिया है (सर्वलोक)** सर्वलोक को जिसने ऐसे **(धर्मेन्द)** धर्म के इन्द्र तीर्थंकर प्रभु के **(चक्रम्)** धर्म चक्र को **(लब्ध्वा)** प्राप्त कर **(च)** और **(शिवं)** मोक्ष को **(उपैति)** प्राप्त करता है।

भावार्थ- जिनेन्द्र भगवान में भक्ति रखने वाला भव्य सम्यग्दृष्टि जीव अपरिमित इन्द्र के ऐश्वर्य को और राजाओं के द्वारा मस्तक से पूजनीय चक्रवर्ती के चक्ररत्न को और समस्त लोक को अपना उपासक बनाने वाले धर्मचक्र (तीर्थंकर पद) प्राप्त कर मोक्ष को भी प्राप्त करता है।

।।इति प्रथमोऽधिकारः।।

अथ द्वितीयोऽधिकारः

''सम्यग्ज्ञान का लक्षण''

अन्यून-मनतिरिक्तं, याथा-तथ्यं बिना च विपरीतात्।
निःसंदेहं वेदय, दा-हुस्तज्ज्ञान-मागमिनः।।42।।

अन्वयार्थ-(यत्) जो ज्ञान **(अन्यूनं)** न्यूनता रहित **(अनतिरिक्तं)** अधिकता रहित **(विपरीतात्)** विपरीतता **(बिना)** रहित **(याथातथ्यं)** जैसा का तैसा **(निःसंदेहं)** संदेह रहित **(वेद)** जानता है **(तत्)** उसको **(आगमिनः)** आगम के ज्ञाता पुरुष **(ज्ञानं)** सम्यग्ज्ञान **(आहुः)** कहते हैं।

भावार्थ- जो ज्ञान वस्तु के स्वरूप को न्यूनता रहित, अधिकता रहित, विपरीतता रहित और संदेह रहित, जैसा का तैसा जानता है, उस ज्ञान को आगम के ज्ञाता (श्रुतकेवली) सम्यग्ज्ञान कहते हैं।

''प्रथमानुयोग का लक्षण''

प्रथमानु-योग-मर्था-ख्यानं चरितं पुराण-मपि पुण्यम्।
बोधि-समाधि-निधानं, बोधति बोधः समीचीनः।।43।।

अन्वयार्थ- **(समीचीनम्बोधः)** सम्यग्ज्ञान **(अर्थाख्यानं)** जिनमें धर्म, अर्थ आदि पुरुषार्थों का कथन है उन शास्त्रों को **(चरितं)** चरित्रों को **(पुराणमपि)** पुराण को भी और **(प्रथमानुयोग)** प्रथमानुयोग को **(बोधति)** जानता है (वह) **(पुण्यम्)** पुण्य का कारण है **(बोधि समाधि)** बोधि-समाधि की **(निधानं)** खानि है।

भावार्थ-जिस ग्रन्थ में चारों पुरुषार्थों का किसी एक महापुरुष के चारित्र और तिरेसठशलाका पुरुषों के चारित्र का वर्णन होता है उन कथा चारित्र और पुराण कहे जाने वाले ग्रन्थों को प्रथमानुयोग कहते हैं। इनके पठन, पाठन आदि से पुण्य तथा बोधि और समाधि प्राप्त होती है। यह सम्यग्ज्ञान का विषय है।

''करणानुयोग का लक्षण''

लोकालोक-विभक्ते, र्युग-परि-वृत्तेश्चतुर्गतीनां च।
आदर्श मिव तथा मति,-रवैति करणानुयोगं च।।44।।

अन्वयार्थ-(तथा मतिः) श्रुतज्ञान ही **(लोकालोक)** लोक-अलोक के **(विभक्तेः)** विभाग को **(च)** और **(युगपरिवृत्तेः)** युग परिवर्तन को **(चतुर्गतीनां)** चारों गतियों को **(च)** भी **(करणानुयोगं)** करणानुयोग **(आदर्शइव)** दर्पण के समान **(अवैति)** जानता है।

भावार्थ- जो शास्त्र लोक और अलोक के विभाग को, युगों के परिवर्तन को और चारों गतियों को दर्पण के समान जैसा का तैसा जानता है, उसे करणानुयोग कहते हैं। यह सम्यग्ज्ञान का विषय है।

''चरणानुयोग का लक्षण''

गृह-मेध्य-नगाराणां, चारित्रोत्पत्ति-वृद्धि रक्षाङ्गम्।
चरणानुयोग समयं, सम्यग्ज्ञानं विजानाति।।45।।

अन्वयार्थ- **(सम्यग्ज्ञानं)** जो सम्यग्ज्ञान **(गृह मेध्यनगाराणां)** गृहस्थ व मुनियों के **(चारित्रोत्पत्ति)** चारित्र की उत्पत्ति **(वृद्धि रक्षाङ्गम्)** वृद्धि और रक्षा के साधनों को **(विजानाति)** जानता है (उसको) **(चरणानुयोग समयं)** चरणानुयोग शास्त्र कहते हैं।

भावार्थ- जिस ग्रंथ में गृहस्थ और मुनियों के चारित्र की उत्पत्ति, वृद्धि और रक्षा का वर्णन है उसे चरणानुयोग कहते हैं। यह भी सम्यग्ज्ञान का विषय है।

"द्रव्यानुयोग का लक्षण"

जीवाजीव-सुतत्त्वे, पुण्यापुण्ये च बन्ध-मोक्षौ च।
द्रव्यानुयोग-दीपः, श्रुत-विद्या-लोक-मातनुते।।46।।

अन्वयार्थ- **(द्रव्यानुयोग दीपः)** द्रव्यानुयोग रूपी दीपक **(जीवाजीव)** जीव-अजीव रूप **(सुतत्त्वे)** सुतत्त्वों को **(च)** और **(पुण्यापुण्ये)** पुण्य और पाप को **(बन्ध मोक्षौ)** बन्ध और मोक्ष को **(श्रुत विद्या लोकं)** भाव श्रुत रूपी प्रकाश को **(आतनुते)** विस्तारता है।

अर्थ-जो जीव और अजीव तत्त्वों को, पुण्य और पाप को, बंध और मोक्ष को, निरूपण करने वाला दीपक है, वह द्रव्यानुयोग है।

।।इति द्वितीयोऽधिकारः।।

अथ तृतीयोऽधिकारः

"चारित्र धारण करने की आवश्यकता"

मोह-तिमिरापहरणे, दर्शन-लाभा दवाप्त-संज्ञानः।
रागद्वेष-निवृत्यै, चरणं प्रति-पद्यते साधुः।।47।।

अन्वयार्थ- **(मोह तिमिर)** मोह रूपी अंधकार के **(अपहरणे)** नाश होने पर **(दर्शन लाभात्)** सम्यग्दर्शन की प्राप्ति से **(अवाप्त संज्ञानः)** प्राप्त हो गया है सम्यग्ज्ञान जिसको ऐसा **(साधुः)** भव्य जीव **(रागद्वेष)** राग द्वेष की **(निवृत्यै)** निवृत्ति के लिये **(चरणं)** सम्यक्चारित्र को **(प्रति पद्यते)** धारण करता है।

भावार्थ- दर्शन मोहनीय का उपशम, क्षय या क्षयोपशम होने पर सम्यग्दर्शन की प्राप्ति होने से जिसको सम्यग्ज्ञान प्राप्त हो गया है ऐसा भव्य जीव अपने राग-द्वेष को दूर करने के लिये सम्यक्चारित्र को धारण करता है।

"राग-द्वेष की निवृत्ति से चारित्रोत्पत्ति"

राग-द्वेष-निवृत्ते, हिंसादि-निवर्तना कृता भवति।
अन-पेक्षितार्थ-वृत्तिः, कः पुरुषः सेवते नृपतीन्।।48।।

अन्वयार्थ- **(राग-द्वेष-निवृत्तेः)** राग-द्वेष की निवृत्ति से **(हिंसादि)** हिंसादि पाँच पापों के **(निवर्तना)** त्याग रूप चारित्र **(कृता)** उत्पन्न **(भवति)** होता है जैसे **(अनपेक्षितार्थवृत्तिः)** आजीविका की इच्छा न रखने वाला (**कः**) कौन **(पुरुषः)** पुरुष **(नृपतीन्)** राजाओं की **(सेवते)** सेवा करता है अर्थात् कोई नहीं करता।

भावार्थ- राग-द्वेष आदि की निवृत्ति होने से हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह इन पाँचों पापों का अभाव रूप चारित्र उत्पन्न होता है क्योंकि रुपया-पैसा आदि की इच्छा नहीं करने वाला कौन पुरुष राजाओं की सेवा करता है? अर्थात् कोई नहीं।

"सम्यक्चारित्र का लक्षण"

हिंसानृत-चौर्येभ्यो, मैथुन-सेवा-परिग्रहाभ्यां च।
पाप-प्रणालि-काभ्यो, विरतिः संज्ञस्य चारित्रम्।।49।।

अन्वयार्थ- **(संज्ञस्य)** सम्यग्ज्ञानियों का **(पापप्रणालिकाभ्यो)** पापस्रव के कारण भूत **(हिंसानृत)** हिंसा, झूठ **(चौर्येभ्यो)** चोरी से **(च)** और **(मैथुन सेवा)** कुशील **(परिग्रहाभ्यां)** परिग्रह से **(विरतिः)** विरक्त होना **(चारित्रम्)** चारित्र है।

भावार्थ- पाप के कारण भूत, हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह से विरक्त होना सम्यग्ज्ञानी का चारित्र है।

"चारित्र के भेद और उपासक"

सकलं विकलं चरणं, तत्सकलं सर्व संग विरतानाम्।
अनगाराणां विकलं, सागाराणां ससंगानाम्।।50।।

अन्वयार्थ- **(तत् चरणं)** वह चारित्र **(सकलं)** सकल और **(विकलं)** विकल दो प्रकार का है (उनमें से) **(सर्वसंगविरतानाम्)** सर्व परिग्रह से रहित **(अनगाराणां)** मुनियों के **(सकलं)** सकल चारित्र (होता है) और **(ससंगानाम्)** परिग्रह सहित **(सागाराणां)** गृहस्थों के **(विकलं)** विकल चारित्र होता है।

भावार्थ-वह चारित्र सकल और विकल के भेद से दो प्रकार का है, उनमें से समस्त परिग्रहों से विरक्त मुनियों के सकल चारित्र होता है और परिग्रह सहित गृहस्थों के विकल चारित्र होता है।

"विकल चारित्र के भेद"

गृहिणां त्रेधा तिष्ठत्-यणु-गुण-शिक्षा-व्रतात्मकं चरणम्।
पंच-त्रि-चतुर्भेदं, त्रयं यथा-संख्यमाख्यातम्।।51।।

अन्वयार्थ- **(गृहिणां)** गृहस्थों का **(चरणम्)** चारित्र **(अणु गुण शिक्षा व्रतात्मकं)** अणुव्रत, गुणव्रत, शिक्षाव्रत रूप **(त्रेधा)** तीन प्रकार का **(तिष्ठति)** है (वह) **(त्रयं)** तीन प्रकार का चारित्र **(यथा संख्यं)** क्रम से **(पंचत्रिचतुर्भेदं)** पांच, तीन और चार भेद रूप **(आख्यातम्)** कहा गया है।

भावार्थ- गृहस्थों का चारित्र अणुव्रत, गुणव्रत और शिक्षाव्रत रूप तीन प्रकार का है वह तीन प्रकार का चारित्र क्रम से पाँच, तीन और चार भेद रूप कहा गया है।

"अणुव्रत का लक्षण"

प्राणाति-पात-वितथ, व्याहारस्तेय काम-मूर्च्छाभ्यः।
स्थूलेभ्यः पापेभ्यो, व्युपरमण-मणुव्रतं भवति।।52।।

अन्वयार्थ- **(स्थूलेभ्यः)** स्थूल रूप से **(प्राणाति पात)** हिंसा **(वितथव्याहार)** झूठ **(स्तेय)** चोरी **(काम)** कुशील **(मूर्च्छाभ्यः)** परिग्रह रूप **(पापेभ्यः)** पापों से **(व्युपरमणं)** विरक्त होना **(अणुव्रतं)** अणुव्रत **(भवति)** होता है।

भावार्थ- स्थूल हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह रूप पापों से विरक्त होना अणुव्रत है।

"अहिंसाणुव्रत का लक्षण"

सङ्कल्पात्कृत कारित, मननाद्योग त्रयस्य चर सत्त्वान्।
न हिनस्ति यत्तदाहुः, स्थूल-वधाद्-विरमणं निपुणाः।।53।।

अन्वयार्थ- **(यत्)** जो **(योगत्रयस्य)** तीन योग के **(कृत कारितमननात्)** कृत कारित और अनुमोदना रूप **(सङ्कल्पात्)** संकल्प से **(चर सत्त्वान्)** त्रस जीवों को **(न हिनस्ति)** नहीं मारता है **(तत्)** उसको **(निपुणाः)** गणधराचार्य **(स्थूल वधाद्)** स्थूल हिंसा से **(विरमणं)** विरक्त होना अहिंसाणुव्रत **(आहुः)** कहते है।

भावार्थ- जो मन, वचन, काय के कृत, कारित, अनुमोदना रूप संकल्प से त्रस जीवों को नहीं मारता है, उसकी उस क्रिया को गणधर आदिक स्थूल हिंसा से विरक्त होना अर्थात् अहिंसाणुव्रत कहते हैं।

''अहिंसाणुव्रत के पाँच अतिचार''

छेदन-बंधन-पीडन,-मति भारारोपणं व्यतीचाराः।
आहार वारणापि च, स्थूल वधाद् व्युपरतेः पंच।।54।।

अन्वयार्थ- **(छेदन)** छेदना **(बंधन)** बांधना **(पीडनम्)** पीड़ा देना **(च)** और **(अतिभारारोपणं)** शक्ति से अधिक भार लादना **(अपि)** और **(आहारवारणा)** आहार देने में कमी करना **(पंच)** ये पाँच **(स्थूल वधाद्)** स्थूल हिंसा से **(व्युपरतेः)** विरक्त होने के (अहिंसाणुव्रत के) **(व्यतीचाराः)** अतिचार हैं।

भावार्थ- अंगों का छेदना, इच्छित स्थानों में जाने से रोकना, डंडा आदि से मारना (पीड़ा देना) शक्ति से अधिक भार लादना और आहार देने में कमी करना ये पांच हिंसा से विरक्त होने के अर्थात् अहिंसाणुव्रत के अतिचार हैं।

''सत्याणुव्रत का लक्षण''

स्थूल-मलीकं न वदति, न परान् वादयति च सत्य-मपि विपदे।
यत्तद्-वदन्ति सन्तः, स्थूल-मृषा-वाद-वैरमणम्।।55।।

अन्वयार्थ- **(यत्)** जो **(स्थूलम्)** स्थूल **(अलीकं)** झूठ को **(न वदति)** न बोलता है **(न परान्)** न ही दूसरों से **(वादयति)** बुलवाता है **(च)** तथा **(विपदे)** विपत्ति के कारण भूत **(सत्यमपि)** सत्य भी नहीं बोलता है **(तत्)** उसे **(सन्तः)** सज्जन पुरुष **(स्थूलमृषावादवैरमणम्)** स्थूल असत्य का त्याग (सत्याणुव्रत) **(वदन्ति)** कहते हैं।

भावार्थ- जो स्थूल झूठ न तो स्वयं बोलता है, और न दूसरों से बुलवाता है तथा दूसरों की आपत्ति के लिये सत्य भी न स्वयं बोलता है, उसको गणधर महापुरुष स्थूल असत्य का त्याग अर्थात् सत्याणुव्रत कहते हैं।

''सत्याणु व्रत के अतिचार''

परिवाद-रहोभ्याख्या,-पैशून्यं कूट-लेख-करणं च।
न्यासापहारितापि च, व्यतिक्रमाःपंच सत्यस्य।।56।।

अन्वयार्थ- **(परिवाद)** झूठा उपदेश देना **(रहोभ्याख्या)** दूसरों की गुप्त बातों को प्रगट करना **(पैशून्यं)** चुगली करना **(कूटलेखकरणं)** झूठा लेख लिखना **(अपि च)** और **(न्यासापहारिता)** किसी की धरोहर को हड़पना **(पञ्च)** ये पाँच **(सत्यस्य)** सत्याणुव्रत के **(व्यतिक्रमाः)** अतिचार हैं।

भावार्थ-झूठा उपेदश देना, गोपनीय कार्य को प्रगट करना, चुगली करना, झूठे दस्तावेज बनाना, दूसरों की धरोहर का अपहरण करना ये सत्याणुव्रत के पाँच अतिचार है।

''अचौर्याणुव्रत का लक्षण''

निहितं वा पतितं वा, सुविस्मृतं वा परस्व-मवि-सृष्टम्।
न हरति यन्न च दत्ते, तद-कृश चौर्यादुपा-रमणम्।।57।।

अन्वयार्थ- **(यत्)** जो **(निहितं)** रखी हुई **(वा)** और **(पतितं)** गिरी हुई **(वा)** और **(सुविस्मृतं)** भूली हुई **(परस्वम्)** अन्य की वस्तु को **(अविसृष्टम्)** बिना दिये **(न हरति)** नहीं हरता है **(च)** और (दूसरों को भी) **(न दत्ते)** नहीं देता है **(तत्)** उसको **(अकृश चौर्यात्)** स्थूल चोरी से **(उपारमणम्)** विरक्त होना अचौर्याणुव्रत कहते हैं।

भावार्थ- जो रखी हुई, गिरी हुई और भूली हुई अन्य की वस्तु को बिना दिये नहीं लेता और दूसरों को भी नहीं देता है उसको स्थूल चोरी से विरक्त अर्थात् अचौर्याणुव्रत कहते हैं।

''अचौर्याणुव्रत के अतिचार''

चौर-प्रयोग-चौरार्था-दान विलोप सदृश-सन्मिश्राः।
हीनाधिक-विनिमानं, पञ्चास्तेये व्यतीपाताः।।58।।

अन्वयार्थ- **(चौर प्रयोग)** चोरी की प्रेरणा या अनुमोदना करना **(चौरार्था दान)** चोरी की वस्तु खरीदना **(विलोप)** राजा की आज्ञा का उल्लंघन करना **(सदृश सन्मिश्राः)** समान वस्तुओं को मिलाना और **(हीनाधिक विनिमानं)** नाप-तौल के बांट कम-बढ़ रखना **(ये पञ्च)** पांच **(अस्तेये)** अचौर्याणुव्रत के **(व्यतीपाताः)** अतिचार हैं।

भावार्थ-चोरी की प्रेरणा करना, चोरी की वस्तु खरीदना, राजा की आज्ञा का उल्लंघन करना, अधिक मूल्य की वस्तु में कम मूल्य की वस्तु का मिश्रण करके देना, नापने-तौलने के बांट वगैरह कम-बढ़ रखना, ये अचौर्याणुव्रत के पांच अतिचार हैं।

''ब्रह्मचर्याणुव्रत का लक्षण''

न तु परदारान् गच्छति, न परान् गमयति च पापभीतेर्यत्।
सा परदार-निवृत्तिः, स्वदार-संतोष-नामापि।।59।।

अन्वयार्थ- **(यत्)** जो **(पापभीतेः)** पाप के भय से **(न तु)** न तो स्वयं **(परदारान्)** पर स्त्री के प्रति **(गच्छति)** गमन करता है **(च)** और **(न परान्)** न दूसरों को **(गमयति)** गमन कराता है **(सा)** वह **(परदार निवृत्तिः)** पर स्त्री त्याग (ब्रह्मचर्याणुव्रत) **(अपि)** अथवा **(स्वदार संतोषनाम)** स्वदार संतोष नामक अणुव्रत कहलाता है।

भावार्थ-जो पाप के भय से स्त्री का न तो स्वयं सेवन करता है न दूसरों को सेवन करने के लिये प्रेरित करता है, वह परस्त्री त्याग अथवा स्वदार संतोष नामक अणुव्रत कहलाता है।

''ब्रह्मचर्याणुव्रत के अतिचार''

अन्य-विवाहाकरणा,-नङ्ग-क्रीडा विटत्व-विपुल-तृषः।
इत्वरिका गमनं चा स्मरस्य पञ्च व्यतीचाराः।।60।।

अन्वयार्थ- **(अन्य विवाह)** दूसरों का विवाह **(करण)** करने में पूर्ण सहयोग करना **(अनङ्ग क्रीड़ा)** काम सेवन से भिन्न अंगों से काम क्रीड़ा करना **(विटत्व)** खोटे वचन बोलना **(विपुल तृषः)** काम की तीव्र इच्छा रखना **(च)** और **(इत्वरिका गमनं)** व्यभिचारिणी स्त्रियों से संबंध रखना **(पञ्च)** ये पांच **(अस्मरस्य)** ब्रह्मचर्याणुव्रत के **(व्यतीचाराः)** अतिचार हैं।

भावार्थ- दूसरों का विवाह करना, काम सेवन के अंगों के अलावा भिन्न अंगों से काम सेवन करना शरीर आदि से कुचेष्टा करना, खोटे वचन बोलना कामसेवन की तीव्र लालसा (इच्छा) रखना, व्यभिचारिणी स्त्री के घर आना जाना, ये पांच ब्रह्मचर्याणुव्रत के अतिचार हैं।

"परिग्रह परिमाणाणुव्रत का लक्षण"

धन-धान्यादि-ग्रन्थं, परिमाय ततोऽधिकेषु निःस्पृहता।
परिमित परिग्रहःस्या, दिच्छा परिमाण-नामाऽपि।।61।।

अन्वयार्थ- **(धन धान्यादि)** धन धान्य (10 प्रकार के) **(ग्रन्थं)** परिग्रह का **(परिमाय)** परिमाण करके **(ततः)** उससे **(अधिकेषु)** अधिक में **(निःस्पृहता)** इच्छा नहीं रखना **(परिमित परिग्रहः)** परिग्रह परिमाण व्रत **(अपि)** अथवा **(इच्छा परिमाणनाम्)** इच्छा परिमाण नामक व्रत **(स्यात्)** है।

भावार्थ- क्षेत्र, वास्तु, हिरण्य, सुवर्ण, धन, धान्य, दासी, दास, कुप्य और भाण्ड इन दसों परिग्रहों का परिमाण रख कर उससे अधिक में इच्छा नहीं रखना परिग्रह परिमाणाणुव्रत अथवा इच्छा परिमाण नामक अणुव्रत कहलाता है।

"परिग्रह परिमाणाणुव्रत के अतिचार"

अति-वाहानाति संग्रह,-विस्मय लोभाति-भार-वहनानि।
परिमित-परिग्रहस्य च, विक्षेपाः पञ्च लक्ष्यन्ते।।62।।

अन्वयार्थ- **(अति वाहनाति)** प्रमाण से अधिक वाहन रखना **(अति संग्रह)** अधिक संग्रह करना **(अति विस्मय)** अति आश्चर्य करना **(अतिलोभ)** अधिक लोभ करना **(अतिभारवहनानि)** अधिक भार लादना **(पञ्च)** ये पांच **(परिमित परिग्रहस्य)** परिग्रह परिमाण व्रत के **(विक्षेपाः)** अतिचार **(लक्ष्यन्ते)** कहे गये हैं।

भावार्थ-अधिक वाहन रखना, अति संग्रह करना, दूसरों का वैभव देखकर अति विस्मय करना, तीव्र लोभ करना और क्षमता से अधिक भार लादना ये पांच परिग्रह परिमाणाणुव्रत के अतिचार कहे गये हैं।

"निरतिचार व्रतों के पालन करने का फल"

पञ्चाणु-व्रत-निधयो, निरति-क्रमणाः फलन्ति सुर लोकं।
यत्रा-वधि-रष्ट-गुणा, दिव्य-शरीरं च लभ्यन्ते।।63।।

अन्वयार्थ- **(निरति क्रमणाः)** निरतिचार **(पञ्चाणु व्रत)** पांच अणुव्रत रूप **(निधयः)** निधियाँ **(सुर लोकं)** स्वर्ग लोक को **(फलन्ति)**

फलती हैं **(यत्र)** जहां **(अवधिः)** अवधिज्ञान **(अष्ट गुणा)** आठ अणिमा आदि गुण (ऋद्धियाँ) **(च)** और, **(दिव्य शरीरं)** दिव्य परम शरीर **(लभ्यन्ते)** प्राप्त होते हैं।

भावार्थ-अतिचार रहित पांच अणुव्रत रूपी निधियाँ स्वर्ग लोक में फलती हैं, स्वर्ग लोक में अवधिज्ञान है, अणिमा आदि आठ ऋद्धियाँ और सप्तधातु रहित सुंदर वैक्रियक शरीर प्राप्त होते हैं।

"पांच अणुव्रतों में प्रसिद्ध होने वालों के नाम"

मातङ्गो धन देवश्च, वारिषेणस्ततः परः।
नीली जयश्च सम्प्राप्ताः, पूजातिशय मुत्तमम्।।64।।

अन्वयार्थ- **(मातङ्गः)** चाण्डाल **(च)** और **(धन देवः)** धनदेव (सेठ) **(ततः परः)** उसके आगे **(वारिषेणः)** वारिषेण **(नीली)** नीली **(च)** और **(जयः)** जय **(उत्तमं)** उत्तम **(पूजातिशयं)** पूजा के अतिशय को **(सम्प्राप्ताः)** प्राप्त हुए हैं।

भावार्थ-यमपाल चाण्डाल, धनदेव (सेठ), वारिषेण, वणिक पुत्री नीली और राज पुत्र जयकुमार क्रम से पांचों व्रतों में उत्तम पूजा के अतिशय (प्रसिद्धि) को प्राप्त हुए।

"पांचों पापों में कुख्यात व्यक्ति"

धनश्री सत्यघोषौ च, तापसा-रक्षका-वपि।
उपाख्येयास्तथा श्मश्रु,-नवनीतो यथाक्रमम्।।65।।

अन्वयार्थ- **(धनश्री)** धनश्री **(सत्यघोषौ)** सत्यघोष **(च)** और **(तापसारक्षकौ)** तपस्वी, यमदण्ड नामक कोतवाल **(अपि)** तथा **(श्मश्रु नवनीतो)** श्मश्रुनवनीत **(यथाक्रमम्)** क्रमशः (पांचों पापों में) **(उपाख्येयाः)** कुख्यात हुए (प्रसिद्ध हुए)।

भावार्थ-धनश्री नामक सेठानी, सत्यघोष नामक पुरोहित, एक तपस्वी, यमदण्ड नामक कोतवाल और श्मश्रु नवनीत नामक वैश्य क्रम से पांचों पापों में कुख्यात हुए हैं (प्रसिद्ध हुए)।

"श्रावक के आठ मूल गुण"

मद्य-मांस-मधु-त्यागैः, सहाणु व्रत पञ्चकम्।

अष्टौ मूल-गुणा-नाहु-र्गृहिणां श्रमणोत्तमाः।।66।।

अन्वयार्थ- **(मद्य मांस)** मद्य मांस **(मधुत्यागैः सह)** मधु त्याग सहित **(अणु व्रत पञ्चकम्)** पांच अणुव्रतों को **(श्रमणोत्तमाः)** गणधरादि आचार्य **(गृहिणां)** गृहस्थों के **(अष्टौ मूल गुणान्)** आठ मूल गुण **(आहुः)** कहते हैं।

भावार्थ-भगवान जिनेन्द्रदेव मद्य त्याग, मधु त्याग, मांस त्याग के साथ अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह को गृहस्थों के आठ मुलगुण कहते हैं।

।।इति तृतीयोऽधिकारः।।

चतुर्थोऽधिकारः

"गुणव्रतों के नाम"

दिग्व्रत-मनर्थ-दण्ड-व्रतं च, भोगोपभोग-परिमाणम्।

अनुबृहंणाद्-गुणाना, - माख्यान्ति गुण-वृतान्यार्याः।।67।।

अन्वयार्थ- **(आर्याः)** गणधरादि देव **(गुणानां)** आठ मूलगुणों को **(अनुबृहंणात्)** बढ़ाने से **(दिग्व्रतं)** दिग्व्रत **(अनर्थदण्डव्रतं)** अनर्थदण्ड व्रत **(च)** और **(भोगोपभोग परिमाणम्)** भोगोपभोग परिमाण को **(गुण व्रतानि)** गुणव्रत **(आख्यान्ति)** कहते हैं।

भावार्थ-तीर्थंकर भगवान दिग्व्रत को, अनर्थदण्डव्रत को और भोगोपभोग परिमाण व्रत को मूलगुणों के बढ़ाने या दृढ़ करने वाले होने से गुणव्रत कहते हैं।

दिग्वलयं परिगणितं कृत्वातोऽहं बहिर्न यास्यामि।

इति सङ्ल्यो दिग्व्रत मातृत्यणु पाप विनिवृत्यै।।68।।

अन्वयार्थ - (अणुपाप) सूक्ष्म पापों को भी (विनिवृत्यै) निर्वृति के लिए (दिग्वलयं) दसों दिशाओं का (परिगणितं) परिणाम (कृत्वा) करके (अतः) इससे (बहिः) बाहर (अहं) मैं (आमृति) जीवन पर्यन्त (न) नहीं

(यास्यामि) जाऊँगा (इति) इस प्रकार (संकल्पः) संकल्प करना (दिग्वंत) दिग्वत है।

भावार्थ- सूक्ष्म पापों से भी मुक्त होने के लिए दसों दिशाओं को सीमित करके इससे बाहर मैं जीवन पर्यंत नहीं जाऊँगा इस प्रकार संकल्प या प्रतिज्ञा करना दिग्व्रत है।

''दिग्व्रत की सीमा''

मकरा-कर-सरि-दटवी, गिरि जन-पद योजनानि मर्यादाः।
प्राहुर्दिशां दशानां, प्रति-संहारे प्रसिद्धानि।।69।।

अन्वयार्थ- **(दशानां)** दशों **(दिशाम्)** दिशाओं में **(प्रति संहारे)** परिमाण में **(प्रसिद्धानि)** प्रसिद्ध-प्रसिद्ध **(मकराकर)** समुद्र **(सरित्)** नदी **(अटवी)** जंगल **(गिरि)** पर्वत **(जनपद)** शहर (देश) और **(योजनानि)** योजनों की **(मर्यादाः)** सीमा **(प्राहुः)** कहते हैं।

भावार्थ-गणधरादि देव दसों दिशाओं के परिमाण में प्रसिद्ध-प्रसिद्ध समुद्र, नदी, पहाड़ी (जंगल), पर्वत, शहर और योजनों की मर्यादा (सीमा) कहते हैं।

''अणुव्रत में भी महाव्रतपना''

अवधे र्बहिरणु-पाप, प्रति विरते र्दिग्व्रतानि धारयताम्।
पञ्च महाव्रत परिणति, मणु-व्रतानि प्रपद्यन्ते।।70।।

अन्वयार्थ-**(अवधेः)** मर्यादा के **(बहिः)** बाहर **(अणु पापप्रति विरतेः)** सूक्ष्म पापों के भी त्याग से **(दिग्व्रतानि)** दिग्व्रतों को **(धारयताम्)** धारण करने वालों के **(अणु व्रतानि)** अणुव्रत **(पञ्च महाव्रत परिणतिम्)** पांच महाव्रतों की सदृशता को **(प्रपद्यन्ते)** प्राप्त होते हैं।

भावार्थ-मर्यादा के बाहर सूक्ष्म पापों के भी त्याग से दिग्व्रतों को धारण करने वालों के अणुव्रत पांच महाव्रतों की सदृशता को प्राप्त होते हैं।

''दिग्व्रती के महाव्रत की कल्पना''

प्रत्याख्यान-तनुत्वान्मन्द-तराश्चरण मोह परिणामाः।
सत्त्वेन दुरवधारा, महाव्रताय प्रकल्प्यन्ते।।71।।

अन्वयार्थ- **(प्रत्याख्यान)** प्रत्याख्यान कषाय के **(तनुत्वात्)** मन्द होने से **(मन्दतराः)** अत्यन्त मद अतएव **(सत्त्वेन)** सत्ता से **(दुरव धारा)** बड़ी कठिनता से जानने योग्य **(चरण मोह परिणामाः)** चारित्र मोहनीय के परिणाम **(महाव्रताय)** महाव्रतपने के लिये **(प्रकल्प्यन्ते)** कल्पना किये जाते हैं।

भावार्थ-प्रत्याख्यानावरण कषाय के मन्द होने से अत्यन्त मन्द अतएव सत्ता से बड़ी कठिनता से जानने योग्य चारित्र मोहनीय के परिणाम महाव्रतपने के लिये कल्पना किये जाते हैं।

''महाव्रत का लक्षण''

पञ्चानां पापानां, हिंसादीनां मनो वचः कायैः।
कृत कारितानु-मोदैस्, त्यागस्तु महाव्रतं महताम्।।72।।

अन्वयार्थ- **(हिंसादीनां)** हिंसादिक **(पञ्चानां)** पांचों **(पापानां)** पापों का **(मनो वचःकायैः)** मन, वचन, काय से तथा **(कृत कारितानु मोदैः)** कृत कारित अनुमोदना से **(त्यागः)** त्याग करना **(महताम्)** महापुरुषों का **(महाव्रतं)** महाव्रत है।

भावार्थ-हिंसादिक पांचों पापों का मन, वचन, काय से तथा कृत-कारित-अनुमोदना से त्याग करना महापुरुषों का महाव्रत कहलाता है।

''दिग्व्रत के अतिचार''

ऊर्ध्वा-धस्तात्तिर्यग्, व्यति पाताः क्षेत्र-वृद्धि-रवधीनाम्।
विस्मरणं दिग्विरते, रत्याशाः पञ्च मन्यन्ते।।73।।

अन्वयार्थ- अज्ञान और प्रमाद से **(ऊर्ध्वाधस्तात्)** ऊपर-नीचे तथा **(तिर्यग्व्यतिपाताः)** विदिशाओं की मर्यादा का उल्लंघन करना **(क्षेत्र वृद्धिः)** क्षेत्र की मर्यादा बढ़ा लेना और **(अवधीनाम्)** की हुई मर्यादाओं का **(विस्मरणं)** भूल जाना ये **(पञ्च)** पांच **(दिग्विरतेः)** दिग्व्रत के **(अत्याशाः)** अतिचार **(मन्यन्ते)** माने जाते हैं।

भावार्थ-ऊपर-नीचे तथा विदिशाओं की मर्यादा का उल्लंघन करना, क्षेत्र की मर्यादा बढ़ा लेना, की हुई मर्यादा को भूल जाना ये पांच दिग्व्रत के अतिचार हैं।

''अनर्थदण्ड व्रत का लक्षण''

अभ्यन्तरं दिग-वधे, रपार्थि केभ्यः सपाप योगेभ्यः।
विरमण-मनर्थ-दण्ड-व्रतं विदुर्व्रत-धरा-ग्रण्यः।।74।।

अन्वयार्थ- **(व्रत धरा ग्रण्यः)** व्रत धारियों में श्रेष्ठ तीर्थंकर देव **(दिगवधेः)** दिशाओं की मर्यादा के **(अभ्यन्तरं)** भीतर **(अपार्थिकेभ्यः)** प्रयोजन रहित **(सपाप योगेभ्यः)** पाप बंध के कारण मन, वचन, काय की प्रवृत्ति से **(विरमणं)** विरक्त होने को **(अनर्थ दण्डव्रतं)** अनर्थ दण्डव्रत **(विदुः)** कहते हैं।

भावार्थ- व्रतों को धारण करने में श्रेष्ठ तीर्थंकर देव दिशाओं की मर्यादा के भीतर प्रयोजन रहित पाप बंध के कारणों से विरक्त होने को अनर्थ दण्डव्रत कहते हैं।

''अनर्थ दण्ड के भेद''

पापोप-देश-हिंसा, दाना पध्यान-दुःश्रुतीः पञ्च।
प्राहुः प्रमादचर्या, मनर्थ-दण्डान-दण्ड-धराः।।75।।

अन्वयार्थ- **(अदण्ड धराः)** दण्डों को नहीं धारण करने वाले गणधरादि देव **(पापोप-देश हिंसा दान)** पापोपदेश, हिंसादान **(अपध्यान, दुःश्रुतीः)** अपध्यान, दुःश्रुति को और **(प्रमादचर्याम्)** प्रमादचर्या को **(पञ्च)** पांच **(अनर्थदण्डान्)** अनर्थदण्ड **(प्राहुः)** कहते हैं।

भावार्थ- योगों की अशुभ प्रवृत्ति रूप दण्ड रहित गणधरादिक पापोपदेश, हिंसादान, अपध्यान, दुःश्रुति और प्रमादचर्या इन पांच को अनर्थदण्ड कहते हैं।

''पापोपदेश अनर्थदण्ड का लक्षण''

तिर्यक्-क्लेश-वणिज्या, हिंसाऽरम्भ, प्रलंभनादीनाम्।
कथा प्रसंग प्रसवः, स्मर्तव्यः पाप उपदेशः।।76।।

अन्वयार्थ- **(तिर्यक् क्लेश वणिज्या)** तिर्यंचों को कष्ट हो ऐसा व्यापार करना **(हिंसाऽरम्भ)** हिंसा, आरंभ और **(प्रलंभनादीनाम्)** छल आदि का **(प्रसवः)** उत्पादक **(कथा प्रसंग)** कथाओं का बार-बार करना **(पाप उपदेशः)** पापोपदेश नामक अनर्थ दण्ड **(स्मर्तव्यः)** जानना चाहिये।

भावार्थ - तिरंचों का तथा क्लेश का व्यापार हिंसा, आरम्भ और छल आदि के उत्पादक कथा प्रसंगो का बार-बार कथन पापोपदेश अनर्थ दण्ड जानना चाहिए।

''हिंसादान अनर्थदण्ड का लक्षण''

परशु-कृपाण-खनित्र, ज्वलनायुध-श्रृंगि-श्रृंखला-दीनाम्।
वध हेतुनां दानं, हिंसा दानं ब्रुवन्ति बुधाः।।77।।

अन्वयार्थ- **(बुधाः)** गणधरादि देव **(परशु)** फरसा **(कृपाण)** तलवार **(खनित्र)** कुदाली, फावड़ा **(ज्वलना युध)** अग्निमय शस्त्र (बन्दूक, तोप आदि) **(श्रृंगि)** सींगी या विष और **(श्रृंखला दीनाम्)** सांकल आदि **(वध हेतुनां)** हिंसा के कारणों के **(दानं)** दान देने को **(हिंसा दानं)** हिंसादान नामक अनर्थदण्ड **(ब्रुवन्ति)** कहते हैं।

भावार्थ- गणधरादिक फरसा, तलवार, कुदाली, फावड़ा, अग्नि, छुरी, कटार आदि हथियार, विष और सांकल आदि हिंसा के उपकरणों के देने को हिंसादान अनर्थदण्ड कहते हैं।

''अपध्यान अनर्थदण्ड का लक्षण''

वध-बन्धच्छेदादे, र्द्वेषा द्रागाच्च पर कलत्रादेः।
आध्यान-मपध्यानं, शासति जिन-शासने विशदाः।।78।।

अन्वयार्थ- **(जिन शासने)** जैनधर्म में **(विशदाः)** प्रवीणजन **(द्वेषात्)** द्वेष के कारण (किसी के वध) **(वधबन्धच्छेदादेः)** नाश होने, बांधे जाने, कट जाने आदि का **(च)** और **(रागात्)** राग के कारण **(पर कलत्रादेः)** पर स्त्री आदि का **(आध्यानं)** चिंतवन करने को **(अपध्यानं)** अपध्यान नामक अनर्थदण्ड **(शासति)** कहते हैं।

भावार्थ-जैनधर्म में प्रवीणजन द्वेष के कारण किसी के नाश होने, बांधे जाने, कट जाने आदि का और राग के कारण पर स्त्री आदि का चिंतवन करने को अपध्यान अनर्थदण्ड कहते हैं।

''दुःश्रुति अनर्थदण्ड का लक्षण''

आरम्भ-सङ्ग-साहस, मिथ्यात्व-द्वेष-राग-मद-मदनैः।
चेतः कलुषयतां, श्रुति-रवधीनां दुःश्रुति र्भवति।।79।।

अन्वयार्थ- **(आरम्भ)** आरम्भ **(सङ्ग)** परिग्रह **(साहस)** साहस

(मिथ्यात्व) मिथ्यात्व **(द्वेष)** द्वेष **(राग)** राग और **(मद मदनैः)** विषय भोग से **(चेतः)** चित्त को **(कलुषयतां)** मलीन करने वाले **(अवधीनां)** शास्त्रों को **(श्रुतिः)** सुनना, **(दु-श्रुतिः)** दुःश्रुति नामक अनर्थदण्ड **(भवति)** होता है।

भावार्थ-आरम्भ, परिग्रह, साहस, मिथ्यात्व, द्वेष, राग और विषयभोग से चित्त को मलीन करने वाले शास्त्रों का सुनना दुःश्रुति अनर्थदण्ड होता है।

''प्रमादचर्या अनर्थदण्ड का लक्षण''

क्षिति-सलिल-दहन-पवना-रम्भं विफलं वनस्पतिच्छेदम्।
सरणं सारण-मपि च, प्रमाद-चर्यां प्रभाषन्ते।।80।।

अन्वयार्थ- आचार्य परमेष्ठी **(विफलं)** बिना मतलब (निष्प्रयोजन) **(क्षिति, सलिल, दहन, पवना-रम्भं)** जमीन खोदने, जल बहाने, अग्नि जलाने, हवा करने के आरंभ को **(वनस्पतिच्छेदम्)** वनस्पति छेदने को **(सरणं)** घूमने को **(च)** और **(सारणं)** घुमाने **(अपि)** भी **(प्रमादचर्यां)** प्रमाद चर्या नामक अनर्थदण्ड **(प्रभाषन्ते)** कहते हैं।

भावार्थ-बिना प्रयोजन के जमीन खोदने, जल बहाने, अग्नि जलाने, हवा करने, वनस्पति छेदने, घूमने और घुमाने को प्रमादचर्या अनर्थदण्ड कहते हैं।

''अनर्थदण्ड व्रत के अतिचार''

कन्दर्पं कौत्कुच्यं, मौखर्य-मति प्रसाधनं पञ्च।
असमीक्ष्य चाधिकरणं, व्यती तयोऽनर्थदण्ड कृद्विरतेः।।81।।

अन्वयार्थ- **(कन्दर्पं)** हंसी करते हुए अशिष्ट वचन कहना **(कौत्कुच्यं)** शरीर की कुचेष्टा करते हुए अशिष्ट वचन कहना **(मौखर्यम्)** वृथा बहुत बकवास करना **(अतिप्रसाधनं)** भोगोपभोग की सामग्री आवश्यकता से अधिक रखना **(च)** और **(असमीक्ष्य अधिकरणं)** बिना विचारे किसी वस्तु पर अधिकार करना ये **(अनर्थदण्ड कृद्विरतेः)** अनर्थदण्ड व्रत के **(पञ्च)** पांच **(व्यतीतः)** अतिचार है।

भावार्थ-हंसी करते हुए अशिष्ट वचन कहना, शरीर की कुचेष्टा करते हुए अशिष्ट वचन कहना, बहुत बकवास करना, आवश्यकता से ज्यादा भोगोपभोग की सामग्री एकत्रित करना, बिना प्रयोजन कार्य करना ये पांच अनर्थदण्ड व्रत के अतिचार हैं।

''भोगोपभोग परिमाणव्रत का लक्षण''

अक्षार्थानां परि संख्यानं भोगोपभोग-परिमाणम्।
अर्थ-वता-मप्य-वधौ, राग-रतीनां तनू-कृतये।।82।।

अन्वयार्थ- **(राग रतीनां)** राग से होने वाली विषयों की लालसा को **(तनू कृतये)** घटाने के लिये **(अवधौ)** परिग्रह परिमाणव्रत की मर्यादा में **(अपि)** भी **(अर्थवताम्)** प्रयोजन भूत **(अक्षार्थानां)** इन्द्रियों के विषयों का **(परि संख्यानं)** परिमाण करना **(भोगोपभोग परिमाणम्)** भोगोपभोग परिमाण नामक व्रत कहलाता है।

भावार्थ- राग से होने वाली विषयों की लालसा को घटाने के लिए परिग्रह परिमाणव्रत में की हुई परिग्रह की मर्यादा में भी प्रयोजनभूत इन्द्रियों के विषयों का परिमाण करना भोगोपभोग परिमाणव्रत कहलाता है।

''भोग और उपभोग का लक्षण''

भुक्त्वा परि-हातव्यो, भोगो भुक्त्वा पुनश्च भोक्तव्यः।
उपभोगोऽशन-वसन,-प्रभृतिः पाञ्चेन्द्रियो विषयः।।83।।

अन्वयार्थ- **(अशन वसनप्रभृतिः)** भोजन वस्त्रादिक **(पाञ्चेन्द्रियः)** पांचों इन्द्रिय संबंधी जो **(विषयः)** विषय **(भुक्त्वा)** भोग करके **(परिहातव्यः)** छोड़ दिया जाता है वह तो **(भोगः)** भोग है **(च)** और **(भुक्त्वा)** भोग करके **(पुनः)** फिर **(भोक्तव्यः)** भोगने योग्य वस्तु **(उपभोगः)** उपभोग है।

अर्थ-भोजन वस्त्र आदिक पांचों इन्द्रिय संबंधी जो विषय एक बार भोग करके छोड़ दिया जाता है वह तो भोग है और भोग करके फिर भोगने योग्य वस्तु उपभोग है।

''मकारों के त्याग का उद्देश्य''

त्रस-हति-परि-हरणार्थं, क्षौद्रंपिशितं प्रमाद-परिहृतये।
मद्यं च वर्जनीयं, जिन-चरणौ शरण-मुपयातैः।।84।।

अन्वयार्थ- **(जिन चरणौ)** जिनेन्द्रदेव के चरण की **(शरणम्)** शरण को **(उपयातैः)** प्राप्त हुए श्रावकों के द्वारा **(त्रस हति परि हरणार्थं)** त्रस जीवों की हिंसा को दूर करने के लिये **(क्षौद्रं)** मधु **(पिशितं)** मांस **(च)** और **(प्रमाद**

परिहृतये) प्रमाद को दूर करने के लिये **(मद्यं)** मदिरा **(वर्जनीयं)** त्याग देना चाहिये।

भावार्थ- जिनेन्द्र देव के चरणों की शरण को प्राप्त हुए श्रावकों के द्वारा त्रस जीवों की हिंसा को दूर करने के लिये मधु, मांस और प्रमाद को दूर करने के लिए मदिरा त्याग देना चाहिये।

''भोगोपभोग परिमाणव्रत में त्याज्य वस्तुएँ''

अल्प-फलं-बहु-विघातान्, मूलक-मार्द्राणि श्रृंङ्गवेराणि।
नव-नीत-निम्ब-कुसुमं, कैतक-मित्येव-मव-हेयम्।।85।।

अन्वयार्थ- **(अल्प फल बहु विघातान्)** फल थोड़ा बहुत जीवहिंसा होने से **(आर्द्राणि)** गीला **(श्रृंङ्गवेराणि)** अदरक **(मूलकं)** मूली, गाजर आदि **(नवनीत)** मक्खन **(निम्ब कुसुमं)** नीम के फूल **(कैतकं)** केवड़े के फूल **(इति)** इस प्रकार **(एवं)** ऐसी और वस्तुएँ **(अवहेयम्)** छोड़ देना चाहिये।

अर्थ-फल थोड़ा और हिंसा अधिक होने से गीला अदरक, मूली, गाजर आदि जमीकंद और मक्खन, नीम के फूल, केतकी के फूल इत्यादि ऐसी और वस्तुएँ छोड़ देना चाहिये।

''व्रत का लक्षण''

यदनिष्टं तद् व्रतयेद्य, च्चानुपसेव्य-मेतदपि जह्यात्।
अभि-संधि-कृता विरति, र्विषयाद्योग्याद् व्रतं भवति।।86।।

अन्वयार्थ- **(यत्)** जो **(अनिष्टं)** प्रकृति विरूद्ध है **(तत्)** उसको **(व्रतयेत्)** छोड़े **(यत्)** जो **(अनुपसेव्य)** सेवन करने योग्य नहीं है **(तत्अपि)** उसको भी **(जह्यात्)** छोड़े **(यतः)** क्योंकि **(योग्यात्)** सेवन करने योग्य **(विषयात्)** पांचों इन्द्रियों के विषयों से **(अभिसंधि कृता)** प्रतिज्ञापूर्वक किया गया **(विरतिः)** त्याग **(व्रतं)** व्रत **(भवति)** होता है।

भावार्थ-(इस व्रत में) जो अनिष्ट हो उसको छोड़ें और जो सेवन करने के अयोग्य हैं उसको भी छोड़ें क्योंकि सेवन करने योग्य पांचों इन्द्रियों के विषयों से प्रतिज्ञापूर्वक किया गया त्याग व्रत कहलाता है।

"यम और नियम का लक्षण"

नियमो यमश्च विहितौ, द्वेधा भोगोपभोग संहारात्।
नियमः परिमित कालो, यावज्जीवं यमोध्रियते।।87।।

अन्वयार्थ-(भोगोपभोग संहारे) भोगोपभोग परिमाणव्रत में **(नियमः यमः च)** नियम और यम **(द्वेधा विहितौ)** दो प्रकार का कहा गया है **(परिमित कालः)** निश्चित काल या मर्यादा पूर्वक होना **(सःनियमः)** वह नियम है तथा **(यावज्जीवं)** जीवन पर्यंत को **(ध्रियते)** धारण किया जाता है **(सःयमः)** वह यम है।

भावार्थ-भोगोपभोग के त्याग के विषय से नियम और यम दो प्रकार के माने गये हैं नियतकाल की मर्यादा पूर्वक किया गया त्याग नियम कहलाता है और जो जीवन पर्यंत के लिये धारण किया जाता है, वह यम कहलाता है।

"भोगोपभोग परिमाण व्रत में नियम की विधि"

भोजन-वाहन-शयन,-स्नान पवित्राङ्ग-राग-कुसुमेषु।
ताम्बूल-वसन-भूषण,-मन्मथ सङ्गीत-गीतेषु।।88।।
अद्य दिवा रजनी वा, पक्षो मासस्तथर्तु-रयनं वा।
इति काल-परिच्छित्त्या, प्रत्याख्यानं भवेन् नियमः।।89।।

अन्वयार्थ- (भोजन वाहन शयन) भोजन, सवारी, बिस्तर **(स्नान)** स्नान **(पवित्राङ्ग)** पवित्र अंग में **(राग कुसुमेषु)** सुगंध पुष्पादिक धारण करने में तथा **(ताम्बूल)** पान **(वसन)** वस्त्र **(भूषण)** अलंकार **(मन्मथ)** विषयभोग **(सङ्गीत)** संगीत **(गीतेषु)** गीत के विषय में **(अद्य)** आज (घड़ी पहर आदि) **(दिवा)** एक दिन **(रजनी)** एक रात्रि **(पक्षः)** एक पक्ष **(मासः)** एक मास **(ऋतु)** दो मास **(वा)** अथवा **(अयनं)** छः मास **(इति)** इस प्रकार **(काल परिच्छित्त्या)** काल के नियम से **(प्रत्याख्यानं)** त्याग करना (भोगोपभोग परिमाण व्रत में) **(नियमः)** नियम **(भवेत्)** होता है।

भावार्थ-भोजन, सवारी, शैया (बिस्तर), स्नान, पवित्र अंग में पुष्पादिक धारण, पान, वस्त्र अलंकार, कामभोग, संगीत और गीत के विषय में एक घड़ी, पहर आदि, एक दिन, एक रात्रि, एक पक्ष, एक मास, दो मास, अथवा छःमास इस प्रकार काल के नियम से त्याग करना भोगोपभोग परिमाण व्रत में नियम होता है।

"भोगोपभोग परिमाण व्रत के अतिचार"

विषय-विषतोऽनुपेक्षा,-नुस्मृति रतिलौल्य मति तृषानुभवो।
भोगोपभोग-परिमा,-व्यतिक्रमाः पञ्च कथ्यन्ते।।90।।

अन्वयार्थ- **(विषय विषतः)** विषय रूपी विष में से **(अनुपेक्षा)** उपेक्षा नहीं करना **(आदर करना)** **(अनुस्मृतिः)** भोगे हुए विषयों का बार-बार स्मरण करना **(अतिलौल्यं)** वर्तमान के विषय भोगों में अतिलालसा रखना **(अति तृषा)** विषय भोगों की प्राप्ति में अत्यंत तृष्णा रखना **(अनुभवः)** विषयानुभव में अत्यधिक आसक्त होना ये **(पञ्च)** पांच **(भोगोपभोग परिमा व्यतिक्रमाः)** भोगोपभोग परिमाण व्रत के अतिचार **(कथ्यन्ते)** कहे गये हैं।

भावार्थ-विषय रूपी विष से उपेक्षा नहीं करना, भोगे हुए विषयों का बार-बार स्मरण करना, भोग भोगने पर भी पुनः-पुनः उनके भोगने की इच्छा करना, भविष्यत कालीन भोगों की प्राप्ति के लिये अत्यंत इच्छा रखना, भोग भोगते हुए भी अत्यंत आसक्ति से भोगना ये पांच भोगोपभोग परिमाण व्रत के अतिचार कहे गए है।

।।इति चतुर्थोऽधिकारः।।

पञ्चमोऽधिकारः

"शिक्षाव्रत के भेद"

देशाव काशिकं वा, सामायिकं प्रोषधोपवासो वा।
वैय्या वृत्यं शिक्षा, व्रतानि चत्वारि शिष्टानि।।91।।

अन्वयार्थ- **(देशावकाशिकं)** देशावकाशिक **(वा)** तथा **(सामायिकं)** सामायिक **(प्रोषधोपवासः)** प्रोषधोपवास **(वा)** और, **(वैय्या वृत्यं)** वैय्याव्रत ये **(चत्वारि)** चार **(शिक्षाव्रतानि)** शिक्षाव्रत **(शिष्टानि)** कहे गये है।

भावार्थ-देशावकाशिक, सामायिक, प्रोषधोपवास और वैय्यावृत्ति ये चार शिक्षाव्रत कहे गए हैं।

"देशावकाशिक शिक्षाव्रत का लक्षण"

देशावकाशिकं स्यात्, काल-परिच्छेदनेन देशस्य।
प्रत्यहमणु व्रतानां, प्रति-संहारो विशालस्य।।92।।

अन्वयार्थ- **(विशालस्य)** दिग्व्रत में की हुई लंबी-चौड़ी **(देशस्य)** क्षेत्र की मर्यादा का **(काल परिच्छेदनेन)** काल के विभाग से **(प्रत्यहम्)** प्रतिदिन **(प्रतिसंहारः)** त्याग करना **(अणुव्रतानां)** अणुव्रत पालक श्रावकों का **(देशाव काशिकं)** देशावकाशिक व्रत (**स्यात्**) होता है।

भावार्थ-दिग्व्रत में की हुई विस्तृत क्षेत्र की मर्यादा का काल के विभाग से प्रतिदिन त्याग करना अणुव्रती श्रावकों का देशावकाशिक व्रत होता है।

"काल की मर्यादा"

गृह-हारि-ग्रामाणां, क्षेत्र-नदी-दाव योजनानां च।
देशावकाशिकस्य, स्मरन्ति सीम्नां तपो-वृद्धाः।।93।।

अन्वयार्थ- **(तपो वृद्धाः)** गणधर देवादि **(देशावकाशिकस्य)** देशावकाशिक शिक्षाव्रत के क्षेत्र की **(गृह हारि ग्रामाणां)** प्रसिद्ध,घर, गली, गांव **(च)** और **(क्षेत्र, नदी, दाव योजनानां)** खेत, नदी, जंगल और योजन की **(सीम्नां)** मर्यादा **(स्मरन्ति)** कहते हैं।

भावार्थ- गणधर देव आदि देशावकाशिक शिक्षाव्रत के क्षेत्र की प्रसिद्ध घर, गली, गाँव और खेत, नदी, जंगल और योजनों की मर्यादा कहते हैं।

"देशव्रत में काल की मर्यादा की रीति"

संवत्-सर-मृतु-रयनं, मास-चतुर्मास-पक्ष-मृक्षं च।
देशावकाशिकस्य, प्राहुःकाला-वधिं प्राज्ञाः।।94।।

अन्वयार्थ- **(प्राज्ञाः)** गणधर देव **(देशावकाशिकस्य)** देशावकाशिक व्रत में **(कालावधिं)** काल की मर्यादा **(संवत् सरम्)** एक वर्ष **(अयनं)** छः माह **(ऋतुः)** दो माह **(मास)** एक मास **(चतुर्मासपक्ष मृक्षं च)** चार मास, एकपक्ष और एक नक्षत्र तक **(प्राहुः)** कहते हैं।

भावार्थ- गणधर देव देशावकाशिक व्रत के काल की मर्यादा एक वर्ष, छः मास, दो माह, एक मास, चार मास, पंद्रह दिन और एक दिन या एक नक्षत्र तक कहते हैं।

"देशव्रती के उपचार से महाव्रत"

सीमान्तानां परतः, स्थूलेतर-पंच-पाप-सन्त्यागात्।
देशाव-काशिकेन च, महाव्रतानि प्रसाध्यन्ते।।95।।

अन्वयार्थ- **(सीमान्तानां)** देशावकाशिक व्रत में की गई सीमा के **(परतः)** बाहर **(स्थूले)** स्थूल **(च)** और **(इतर)** इतर (सूक्ष्म) दोनों प्रकार के **(पंच पाप सन्त्यागात्)** पांचों पापों का त्याग होने से **(देशावकाशिकेन)** देशावकाशिक व्रत धारी के द्वारा **(महाव्रतानि)** महाव्रत **(प्रसाध्यन्ते)** साधे जाते हैं।

भावार्थ- देशावकाशिक व्रत में की गई सीमा के बाहर स्थूल और सूक्ष्म दोनों प्रकार के पांचों पापों का त्याग होने से देशावकाशिक व्रतधारी के द्वारा महाव्रत साधे जाते हैं।

"देशावकाशिक शिक्षाव्रत के अतिचार"

प्रेषण-शब्दानयनं, रूपाभि-व्यक्ति-पुद्गल-क्षेपौ।
देशावकाशिकस्य, व्यपदिश्यन्तेऽत्ययाः पंच।।96।।

अन्वयार्थ- मर्यादा के बाहर किसी को **(प्रेषण)** भेजना **(शब्द)** शब्द करना **(अनयनं)** किसी वस्तु को मंगवाना **(रूपाभि व्यक्ति)** शरीर दिखाना और **(पुद्गल क्षेपौ)** पत्थर आदि फेंकना ये **(पंच)** पांच **(देशाव काशिकस्य)** देशावकाशिक शिक्षाव्रत के **(अत्ययाः)** अतिचार **(व्यपदिश्यन्ते)** कहे जाते हैं।

भावार्थ- देशावकाशिक व्रत में की हुई मर्यादा के बाहर भेजना, शब्द करना, वस्तु को मंगवाना, शरीर दिखाना और पत्थर आदि फेंकना ये पांच देशावकाशिक शिक्षाव्रत के अतिचार कहे जाते हैं।

"सामायिक शिक्षाव्रत का लक्षण"

आसमय मुक्ति मुक्तं, पंचा घानामशेष भावेन।
सर्वत्र च सामयिकः,सामयिकं नाम शंसन्ति।।97।।

अन्वयार्थ- **(आसमय मुक्ति)** किसी नियत समय की समाप्ति पर्यन्त **(मुक्तं)** त्याग करने को **(पंचाघानाम्)** पांचों पापों के **(अशेष भावेन)** पूर्ण रूपेण **(सर्वत्र)** सभी जगह **(च सामयिकः)** आगम के ज्ञाता **(सामयिकं नाम)** सामायिक नामक शिक्षाव्रत **(शंसन्ति)** कहते हैं।

भावार्थ-गणधर आदि देव मन, वचन, काय और कृत, कारित, अनुमोदना से सब जगह सामायिक के लिये निश्चित समय तक पाचों पापों के त्याग करने को सामायिक नामक शिक्षाव्रत कहते हैं।

''सामायिक के योग्य समय''

मूर्ध-रूह-मुष्टि-वासो,-बन्धं पर्य्यङ्बन्धनं चापि।
स्थान-मुपवेशनं वा, समयं जानन्ति समयज्ञाः।।98।।

अन्वयार्थ- **(समयज्ञाः)** आगम के ज्ञाता पुरुष **(मूर्ध रूह मुष्टि वासो बन्धं)** केशबंध, मुष्टि बंध, वस्त्र बंध के काल को **(पर्य्यङ्बन्धनं)** पद्मासन के काल को **(च अपि)** और भी **(स्थानं)** खड्गासन **(वा)** अथवा **(उपवेशनं)** सामान्य आसन के काल को **(समयं)** सामायिक के योग्य समय **(जानन्ति)** जानते हैं (कहते हैं)।

भावार्थ-ज्ञानी पुरुष, केशबन्ध, मुष्टिबन्ध, वस्त्रबन्ध पर्यन्त काल को, पद्मासन, कायोत्सर्ग और सामान्य आसन के काल को सामायिक के योग्य समय कहते हैं।

''सामायिक करने का स्थान''

एकान्ते सामयिकं, निर्व्याक्षेपे वनेषु वास्तुषु च।
चैत्या लयेषु वापि च, परिचेतव्यं प्रसन्नधिया।।99।।

अन्वयार्थ- **(निर्व्याक्षेपे)** उपद्रव रहित **(एकान्ते)** एकान्त में **(वनेषु)** वन में **(वास्तुषु)** मकान में या धर्मशाला में **(च)** और **(चैत्यालयेषु)** चैत्यालयों में **(अपि)** तथा पर्वत आदि में भी (श्रावकों को) **(प्रसन्नधिया)** प्रसन्न चित्त से **(सामयिकं)** सामयिक **(परिचेतव्यं)** बढ़ाना चाहिये।

भावार्थ-उपद्रव रहित (निराकुल) एकान्त स्थान में, वन में, एकान्त घर या धर्मशाला और चैत्यालयों में और पर्वत की गुफा आदि में प्रसन्नचित्त से सामायिक बढ़ाना चाहिये।

''सामायिक बढ़ाने का समय''

व्यापार-वैमनस्याद्, विनि-वृत्या-मन्तरात्म-विनिवृत्तया।
सामयिकं बध्नीया,-दुपवासे चैक-भुक्ते वा।।100।।

अन्वयार्थ- श्रावक, **(उपवासे)** उपवास के दिन **(च)** और **(एक भुक्ते वा)** एकासन के दिन भी **(व्यापार वैमनस्यात्)** शरीर आदि की कुचेष्टा तथा चित्त की कलुषिता से **(विनिवृत्तया)** निर्वृत्य होकर **(अन्तरात्म विनिवृत्त्या)** मन के विकल्पों की विशेष निर्वृत्ति के द्वारा **(सामायिकं)** सामायिक को **(बध्नीयात्)** बढ़ावें।

भावार्थ- व्यापार, कायादि की चेष्टा और मनोव्यग्रता से निर्वृत्त होने पर अन्तर्जल्पादि विकल्पों की निर्वृत्ति से उपवास के दिन और एकाशन के दिन सामायिक को बढ़ाना चाहिये।

''प्रतिदिन सामायिक करने का उपदेश''

सामयिकं प्रति दिवसं, यथा-वदप्य नल-सेन चेतव्यम्।
व्रत-पंचक-परिपूरण,-कारण मवधान-युक्तेन।।101।।

अन्वयार्थ- **(अनलसेन)** आलस्य रहित **(अपि)** और **(अवधानयुक्तेन)** एकाग्रचित्त वाले श्रावकों को **(प्रति दिवसं)** प्रतिदिन **(यथावत्)** विधिपूर्वक **(व्रत पंचक)** पांचों अणुव्रतों की **(परिपूरण कारणं)** परिपूर्णता का कारणभूत **(सामयिकं)** सामायिक शिक्षाव्रत **(चेतव्यम्)** बढ़ाना चाहिये।

भावार्थ-पांचों व्रत की पूर्ति का कारण सामायिक आलस्य रहित एकाग्रचित्त सहित श्रावक के द्वारा प्रतिदिन शास्त्रोक्त विधि से बढ़ाना चाहिये।

''सामायिक के समय मुनि तुल्य''

सामायिके सारम्भाः, परिग्रहा नैव सन्ति सर्वेऽपि।
चेलोप-सृष्ट-मुनिरिव, गृही तदा याति यति भावम्।।102।।

अन्वयार्थ- **(सामयिके)** सामायिक काल में **(सारम्भाः)** आरम्भ सहित **(सर्वे अपि)** सभी **(परिग्रहा)** परिग्रह **(न एव सन्ति)** नहीं होते हैं **(तदा)** उस समय **(गृही)** गृहस्थ **(चेलोप सृष्ट मुनिरिव)** उपसर्ग के कारण वस्त्र के ढके हुए मुनि के समान **(यति भावम्)** मुनिपने को **(याति)** प्राप्त होता है।

भावार्थ-जब सामायिक के समय में कृषि आदि आरम्भ सहित सब अंतरंग-बहिरंग परिग्रह नहीं होते हैं। उस समय गृहस्थ उपसर्ग के कारण वस्त्र से ढके हुए मुनि के समान मुनिपने को प्राप्त होते हैं।

"सामायिक में परीषह आदि सहन करें"

शीतोष्ण-दंश-मशक,-परीषह-मुप-सर्ग-मपि च मौनधराः।
सामयिकं प्रतिपन्ना, अधि-कुर्वीरन्-नचल योगाः।।103।।

अन्वयार्थ- **(सामयिकं)** सामायिक को **(प्रतिपन्ना)** धारण करने वाले **(मौनधराः)** मौनधारी **(च)** और **(अचल योगाः)** योगों की चंचलता रहित व्यक्ति **(शीतोष्ण दंश मशक)** शीतऊष्ण और दंशमशक **(परीषहम्)** परिषहों को और **(उपसर्गम्)** उपसर्गों को **(अपि)** भी **(अधि कुर्वीरन्)** सहन करें।

भावार्थ- सामायिक में लीन व्यक्ति मौन धारणकर योगों की चंचलता रहित शीत, ऊष्ण, डाँस, मच्छर आदि परिषहों को और देव, मनुष्य, तिर्यञ्च कृत उपसर्गों को भी सहन करें।

"सामायिक के समय करने योग चिन्तवन"

अशरण-मशुभ-मनित्यं, दुःख-मनात्मान-मावसामिभवम्।
मोक्षस्तद्विपरीतात्मेति ध्यायन्तु सामयिके।।104।।

अन्वयार्थ- श्रावक **(सामयिके)** सामायिक में **(इतिध्यान्तु)** इस प्रकार चिंतवन करें कि मैं **(अशरणं)** अशरण रूप **(अशुभम्)** अशुभरूप **(अनित्यं)** अनित्य रूप **(दुःख)** दुःख रूप **(अनात्मानं)** आत्मा से भिन्न (पररूप) **(भवम्)** संसार में **(आवसामि)** निवास करता हूँ और **(मोक्षः)** मोक्ष **(तद्विपरीतात्म)** इससे विपरीत आत्मस्वरूप वाला है।

भावार्थ- सामायिक करने वाले व्यक्ति सामायिक में अशरण रूप, अशुभ रूप, अनित्य रूप, दुःख रूप और पर रूप संसार में मैं निवास करता हूं और मोक्ष उस संसार से विपरीत है इस प्रकार ध्यान (चिन्तवन) करें।

"सामायिक शिक्षाव्रत के अतिचार"

वाक्काय-मान-सानां, दुःप्रणि-धानान्य-नादरास्मरणे।
सामयिकस्यातिगमा, व्यज्यन्ते पंच भावेन।।105।।

अन्वयार्थ- **(वाक्काय मान सानां)** वचन, काय और मन का **(दुःप्रणि धानानि)** चलायमान करना **(अनादर अस्मरणे)** अनादर एवं

अस्मरण करना (सामायिक का काल व पाठ भूल जाना) **(भावेन)** निश्चय से ये **(पंच अतिगमाः)** पांच अतिचार **(व्यज्यन्ते)** प्रकट किये जाते हैं **(सामयिकस्य)** सामायिक के।

भावार्थ- वचन, काय, मन का चलायमान करना, अनादर करना, सामायिक का काल व पाठ भूल जाना ये पांच निश्चय से सामायिक के अतिचार कहे गये हैं।

''प्रोषधोपवास शिक्षाव्रत का लक्षण''

पर्वण्यष्टम्यां च, ज्ञातव्यः प्रोपधोप वासस्तु।
चतुरभ्य-वहार्य्याणां, प्रत्याख्यानां सदेच्छाभिः।।106।।

अन्वयार्थ- **(पर्वणि)** चतुर्दशी **(च)** और **(अष्टम्यां)** अष्टमी के दिन **(तु)** और (**सदा**) हमेशा (पूर्व के दिन के अलावा भी) **(इच्छाभिः)** अपनी आंतरिक इच्छाओं से **(चतुरभ्य वहार्य्याणां)** चारों प्रकार के आहारों का **(प्रत्याख्यानां)** त्याग करना **(प्रोषधोपवासः)** प्रोषधोपवास शिक्षाव्रत **(ज्ञातव्यः)** जानना चाहिये।

भावार्थ-सदैव प्रत्येक चतुर्दशी और अष्टमी के दिन अपनी आंतरिक इच्छाओं से खाद्य (दाल, रोटी आदि) स्वाद (लड्डू, पेड़ा आदि), लेह्य (रबड़ी आदि), पेय (दूध, पानी आदि) रूप चारों प्रकार के आहारों का त्याग करना प्रोषधोपवास शिक्षाव्रत जानना चाहिये।

''उपवास के दिन त्याज्य कार्य''

पंचानां पापाना, मलङ्क्रिया-रम्भ-गन्ध-पुष्पाणाम्।
स्नानाञ्जन-नस्याना,-मुपवासे परिहृतिं कुर्य्यात्।।107।।

अन्वयार्थ- **(उपवासे)** उपवास के दिन **(पंचानां पापानां)** हिंसादि पांचों पापों का **(अलङ्क्रिया)** शरीर का वस्त्रादिक से अलंकार करना (आरम्भ **गन्ध पुष्पाणाम्)** आरम्भ का, सुगंधित इत्रादि का, विविध पुष्पों का **(सूंघने या धारण करने का)** **(स्नानाञ्जन)** स्नान का, अंजन **(काजल)** लगाने का **(नस्यानां)** नाक में दवाई आदि डालने का अथवा सूंघने का **(परिहृतिं)** त्याग **(कुर्य्यात्)** करना चाहिये।

भावार्थ- उपवास के दिन पांचों पापों का और स्नान, अंजन और पुष्प आदि सूंघने का, वस्त्रालंकारों से सज्जित होने का, कृषि आदि आरम्भों का, चन्दन, इत्र आदि गंध द्रव्यों के उपयोग का त्याग करना चाहिये।

"उपवास के दिन का कर्त्तव्य"

धर्मामृतं सतृष्णः, श्रवणाभ्यां पिबतु पाययेद्वान्यान्।
ज्ञान-ध्यान-परो वा, भवतूप-वसन् नतन्द्रालुः।।108।।

अन्वयार्थ- **(उपवसन्)** उपवास करने वाला श्रावक **(अतन्द्रालु)** आलस्य रहित और **(सतृष्णः)** उत्कंठित (सन्) (होता हुआ) **(श्रवणाभ्यां)** अपने कानों से **(धर्मामृतं)** धर्मरूपी अमृत को **(पिबतु)** पीवे (पान करे) **(वा)** तथा **(अन्यान्)** दूसरों को **(पाययेत्)** पान करावे तथा **(ज्ञान ध्यान परः)** ज्ञान ध्यान में लीन **(भवतु)** होवे।

भावार्थ- उपवास करने वाला व्यक्ति आलस्य रहित और उत्कण्ठित होता हुआ धर्म रूपी अमृत को अपने कानों से पीवे तथा दूसरों को पिलावे और ज्ञान ध्यान में लवलीन रहे।

"प्रोषध, उपवास और प्रोषधोपवास का लक्षण"

चतुराहार-विसर्जन,-मुपवासः-प्रोषधः सकृद्भुक्तिः।
स प्रोषधोपवासो, यदुपोष्यारम्भ माचरति।।109।।

अन्वयार्थ- **(चतुराहार विसर्जनम्)** चारों प्रकार के आहार का त्याग करना **(उपवासः)** उपवास और **(सकृद्)** एक बार **(भुक्तिः)** भोजन करना **(प्रोषधः)** प्रोषध (एकाशन) होता है **(यत्)** जो **(उपोष्य)** उपवास करके **(आरम्भं)** पारणा के दिन एक बार भोजन **(आचरति)** करते है **(स)** वह **(प्रोषधोपवासः)** प्रोषधोपवास है।

भावार्थ- चार प्रकार के आहार का सर्वथा त्याग करना उपवास, एक बार भोजन करना प्रोषध (एकाशन), उपवास करके एकाशन करना प्रोषधोपवास, कहलाता है।

"प्रोषधोपवास शिक्षाव्रत के अतिचार"

ग्रहण-विसर्गास्तरणा-न्यदृष्ट-मृष्टान्य-नादरास्मणे।
यत्प्रोषधोपवास, व्यतिलङ्घन-पंचकं तदिदम्।।110।।

अन्वयार्थ- **(यत्)** जो **(अदृष्ट मृष्टानि)** बिना देखे, बिना शोधे हुए **(ग्रहण)** ग्रहण करना **(विसर्गाः)** छोड़ना **(तरणानि)** बिस्तर बिछाना **(अनादरास्मणे)** अनादर करना, भूल जाना **(इदम्)** यह **(प्रोषधोपवास)** प्रोषधोपवास के **(पंचकं)** पांच **(व्यतिलङ्घन)** अतिचार है।

भावार्थ- बिना देखे बिना शोधे हुए पूजा के उपकरणों को ग्रहण करना, मल-मूत्र आदि का त्याग करना, बिस्तर बिछाना, आवश्यक क्रियाओं में अनादर करना, योग्य क्रियाओं को भूल जाना यह प्रोषधोपवास शिक्षाव्रत के पांच अतिचार हैं।

''वैय्यावृत्य शिक्षाव्रत का लक्षण''

दानं वैयावृत्यं, धर्माय तपोधनाय गुण निधये।
अन-पेक्षितोप-चारो,-पक्रिय-मगृहाय विभवेन।।111।।

अन्वयार्थ- **(अगृहाय)** गृहत्यागी **(गुण निधये)** गुणों के निधान **(तपोधनाय)** तपस्वियों को **(विभवेन)** विधि द्रव्यादि सम्पदा से **(धर्माय)** धर्म के लिये **(अनपेक्षितोपचारोपक्रियं)** उपकार की इच्छा से रहित होकर **(दानं)** दान देना, **(वैयावृत्यं)** वैय्यावृत्य है।

भावार्थ- गुणों के निधान गृह त्यागी मुनिराज के लिये, स्व-पर के धर्म की वृद्धि के लिये, मंत्र लाभ आदि प्रत्युप्कार की अपेक्षा से रहित यथाशक्ति दान देना वैय्यावृत्य शिक्षाव्रत कहलाता है।

''वैय्यावृत्य का दूसरा लक्षण''

व्यापत्ति-व्यपनोदः, पदयोः संवाहनं च गुण रागात्।
वैयावृत्यं यावा नुपग्रहोऽन्योऽपि संयमिनाम्।।112।।

अन्वयार्थ- **(गुणरागात्)** गुणों में अनुराग से **(संयमिनाम्)** संयमीजनों के **(व्यापत्ति व्यपनोदः)** दुःख को दूर करना, **(पदयोः)** पैरों का **(संवाहनं)** दबाना **(च अपि)** और भी **(अन्यः)** अन्य **(यावान्)** जितना **(उपग्रहः)** उपकार है वह **(वैयावृत्यं)** वैय्यावृत्य है।

भावार्थ- गुणों में प्रेम होने से संयमीजनों के दुःखों को दूर करना, पैरों को दबाना तथा अन्य भी जितना उपकार है, वह वैय्यावृत्य कहलाता है।

''दान का लक्षण''

नव-पुण्यैः प्रति पत्तिः, सप्त-गुण-समा-हितेन शुद्धेन।
अप-सूना-रम्भाणा,-मर्याणा-मिष्यते दानम्।।113।।

अन्वयार्थ- **(सप्तगुण समाहितेन)** सात गुण सहित **(शुद्धेन)** शुद्धि से सहित **(नव पुण्यैः)** नवधा भक्ति पूर्वक **(अपसूनारम्भाणां)** पांच सूना और आरम्भ रहित **(आर्याणाम्)** मुनीश्वरों को **(प्रति पत्तिः)** आहार आदि देना **(दानम्)** दान **(इष्यते)** कहलाता है।

भावार्थ- सात गुण सहित भद्र श्रावक के द्वारा नवधा भक्ति सहित एवं पांच सूना और आरम्भ रहित मुनि को आहार आदि देना दान कहलाता है।

''दान का फल''

गृह-कर्मणापि निचितं, कर्म विमार्ष्टि खलु गृहविमुक्तानाम्।
अतिथीनां प्रति-पूजा, रुधिर मलं धावते वारि।।114।।

अन्वयार्थ-(जैसे) जिस प्रकार **(वारि)** जल **(अलम्)** अच्छी तरह से **(रुधिरम्)** खून को **(धावते)** धो देता है उसी प्रकार से **(गृहविमुक्तानाम्)** गृह त्यागी **(अतिथीनां)** अतिथिजनों को **(प्रति पूजा)** योग्य आहारादि दान **(अपि)** भी **(खलु)** निश्चय से **(गृह कर्मणा)** गृह के कार्यों से **(निचितं)** संचित **(कर्म)** पापों को **(विमार्ष्टि)** नष्ट कर देता है।

भावार्थ- जैसे जल खून को धो देता है वैसे ही गृह त्यागी अतिथि जनों को यथायोग्य आहार आदि देने से घर गृहस्थी के काम में संचित पाप भी निश्चय से नष्ट हो जाते है।

''नवधा भक्ति का फल''

उच्चैर्गोत्रं प्रणते, र्भोगो दाना-दुपासनात्पूजा।
भक्तेः सुंदर रूपं, स्तवनात्कीर्तिस्तपो निधिषुः।।115।।

अन्वयार्थ- **(तपोनिधिषुः)** तपस्वी मुनियों को **(प्रणतेः)** नमस्कार करने से **(उच्चैर्गोत्रं)** उच्च गोत्र **(दानात्)** दान से **(भोगः)** भोग **(उपासनात्)** सेवा उपासना करने से **(पूजा)** पूजा (सम्मान) **(भक्तेः)** भक्ति करने से **(सुंदर रूपं)** सुंदर रूप और **(स्तवनात्)** स्तुति करने से **(कीर्तिः)** कीर्ति होती है।

भावार्थ- मुनिराजों को नमस्कार करने से उच्च गोत्र की, दान देने से भोग की, सेवा (उपासना) करने से मान्यता (पूजा) की, भक्ति करने से सुन्दर रूप की, स्तुति करने से कीर्ति की प्राप्ति होती है।

''अल्पदान से महाफल''

क्षिति-गत-मिव वट-बीजं, पात्रगतं दान-मल्प-मपि काले।
फलतिच्छाया-विभवं, बहु-फल-मिष्टंशरीर भृताम्।।116।।

अन्वयार्थ- **(इव)** जैसे **(क्षिति गतं)** पृथ्वी में बोया हुआ **(अल्पमपि)** छोटा भी **(वट बीजं)** वट का बीज **(काले)** समय पर **(छाया-विभव)** बड़ी भारी छाया को और **(बहु फलं)** बहुत फलों को **(फलित)** फलता है (देता है) उसी प्रकार **(पात्र गतं)** पात्र को दिया गया **(अल्पं दानं)** थोड़ा भी दान **(शरीर भृताम्)** शरीर धारियों को **(इष्टं)** इच्छा अनुसार **(फलं)** बहुत फलों को, **(फलति)** फलता है।

भावार्थ- जैसे अच्छी उपजाऊ जमीन में बोया हुआ बट का बीज अपने समय पर बड़ी भारी छाया को और बहुत से फलों को फलता है उसी प्रकार योग्य समय में सत्पात्र को दिया गया थोड़ा भी दान जीवों के उत्तम ऐश्वर्य और विभूति सहित इच्छानुसार भोगोपभोग आदि अनेक फलों को फलता है (देता है)

''दान के भेद''

आहारौषध-यो, रप्युप करणावासयोश्च दानेन।
वैयावृत्यं ब्रुवते, चतुरात्मत्वेन चतुरस्त्राः।।117।।

अन्वयार्थ- **(चतुरस्त्राः)** चार ज्ञान के धारी गणधर देव **(आहारौषधयोः)** आहार दान, औषध दान **(अपि)** तथा **(उपकरणावासयोः)** उपकरण **(च)** और आवास के **(दानेन)** दान से **(चतुरात्मवेन)** चार प्रकार का **(वैयावृत्यं)** वैय्यावृत्य **(ब्रुवते)** कहते है।

भावार्थ- चार ज्ञान के धारक गणधर देव आहार, औषध, उपकरण (शास्त्र, पिच्छी, कमण्डलु आदि) तथा आवास (वसतिका) आदि इन चारों दानों के भेद से वैयावृत्य भी चार प्रकार की कहते हैं।

''दानों में प्रसिद्ध होने वालों के नाम''

श्रीषेण-वृषभसेने, कौण्डेशः सूकरश्च दृष्टान्ताः।
वैयावृत्यस्यैते, चतुर्विकल्पस्य मन्तव्यः।।118।।

अन्वयार्थ- **(श्रीषेण वृषभसेने)** श्रीषेण राजा और वृषभ सेना पुत्री (आहार दान और औषधि दान में) **(कौण्डेशः)** कौण्डेश नामक ग्वाला (उपकरण दान में) **(च)** और **(सूकरः)** शूकर (आवास दान में) **(एते)** ये **(चतुर्विकल्पस्य)** चार भेद वाले **(वैयावृत्यस्य)** वैय्यावृत्य के **(दृष्टान्ताः)** दृष्टान्त **(मन्तव्यः)** जानना चाहिये।

भावार्थ- श्रीषेण राजा, सेठ की पुत्री वृषभ सेना, कौण्डेश नामक ग्वाला और सूकर ये चार भेद वाले वैय्यावृत्य के दृष्टान्त जानना चाहिये।

''अर्हत् पूजा की महिमा''

देवाधि-देव-चरणे, परिचरणं सर्व-दुःख-निर्हरणम्।
काम-दुहिकाम-दाहिनी, परि-चिनुया-दादृतोनित्यम्।।119।।

अन्वयार्थ- **(काम दुहि)** इच्छित फल देने वाला **(कामदाहिनी)** विषय वासना को नष्ट करने वाले **(देवाधिदेव चरणे)** देवों के देव अरिहन्त देव के चरणों की **(परिचरणं)** पूजा **(सर्व दुःख निर्हरणम्)** सब दुःखों को नाश करने वाली है, इसलिए **(आदृतः)** आदर से (**नित्यम्**) प्रतिदिन (पूजा) **(परिचिनुयात्)** करना चाहिए।

भावार्थ- इच्छित फल देने वाले, विषय वासना को नष्ट करने वाले देवों के देव अरिहंत देव के चरणों की पूजा सब दुःखों को नाश करने वाली है, इसलिये आदर भाव सहित प्रतिदिन पूजन करना चाहिये।

''पूजा का माहात्म्य और उसका फल भोक्ता''

अर्हच्चरण-सपर्या,-महानुभावं महात्मना-मवदत्।
भेकः प्रमोद-मत्तः, कुसुमेनैकेन राज-गृहे।।120।।

अन्वयार्थ- **(प्रमोद मत्तः)** प्रमोद से युक्त **(भेकः)** मेढ़क **(राजगृहे)** राजगृही में **(एकेन कुसुमेन)** एक फूल से **(अर्हच्चरण सपर्या महानुभावं)** अरिहंत भगवान की पूजा के प्रभाव को **(महात्मनाम्)** महापुरुषों के सामने **(अवदत्) (कहा था)** प्रगट किया था।

भावार्थ- प्रमुदित होते हुए एक मेढ़क ने राजगृही में एक फूल से अरिहन्त भगवान की पूजा के प्रभाव को महापुरुषों के सामने प्रगट किया था।

''वैय्यावृत्य के अतिचार''

हरित-पिधान-निधाने, ह्यनादरास्मरण-मत्सरत्वानि।
वैया-वृत्त्यस्यैते, व्यति-क्रमाः पंच कथ्यन्ते।।121।।

अन्वयार्थ- **(हरित पिधान निधाने)** हरी वस्तु से ढ़कना, हरी वस्तु में रखना **(अनादर)** अनादर **(अस्मरण मत्सरत्वानि)** दान विधि भूल जाना, ईष्या रखना **(एते)** ये **(पंच)** पांच **(वैयावृत्यस्य)** वैय्यावृत्ति के **(व्यतिक्रमाः)** अतिचार **(कथ्यन्ते)** कहते है।

भावार्थ- आहार आदि की वस्तु को हरे पत्ते से ढकना, हरे पत्ते आदि पर रखना, अनादर करना, नवधा भक्ति आदि भूल जाना, ईर्ष्या रखना ये पाँच वैय्यावृत्य के अतिचार कहलाते हैं।

।।इति पञ्चमोऽधिकारः।।

षष्ठोऽधिकारः

''सल्लेखना का लक्षण''

उपसर्गे दुर्भिक्षे, जरसि रुजायां च निःप्रतीकारे।
धर्माय तनु-विमोचन,-माहुः सल्लेखना-मार्याः।।122।।

अन्वयार्थ- **(आर्याः)** गणधर आदि देव **(निःप्रतीकारे)** अटल (जिसका कोई उपचार न हो) **(उपसर्गे)** उपसर्ग के आने पर **(दुर्भिक्षे)** अकाल पड़ने पर **(जरसि)** बढ़ापा **(च)** और **(रुजायां)** रोग होने पर **(धर्माय)** धर्म के लिए **(तनुविमोचनं)** शरीर के छोड़ने को **(सल्लेखनां)** सल्लेखना **(आहुः)** कहते हैं।

भावार्थ- गणधरादिक श्रेष्ठ पुरुष जिसका प्रतिकार नहीं किया जा सके ऐसा उपसर्ग आने पर, अकाल पड़ने पर, बुढ़ापा आने पर, रोग होने पर, धर्म के लिये शरीर के छोड़ने को सल्लेखना कहते हैं।

''सल्लेखना की आवश्यकता''

अन्तः क्रियाधिकरणं, तपः फलं सकल-दर्शिनः स्तुवते।
तस्माद्यावद्-विभवं, समाधि-मरणे प्रयति-तव्यम्।।123।।

अन्वयार्थ- **(सकल दर्शिनः)** सर्वज्ञदेव **(अन्तः क्रियाधिकरणं)** मरण समय सल्लेखना व्रत धारण करना ही **(तपः फलं)** तप का फल **(स्तुवते)** कहते हैं **(तस्मात्)** इसलिए **(यावद्विभवं)** अपनी शक्ति के अनुसार **(समाधि मरणे)** समाधि व्रत धारण करने में **(प्रयति तव्यम्)** प्रयत्न करना चाहिए।

भावार्थ- सर्वज्ञ देव मरण के समय समाधि मरण स्वरूप सल्लेखना को तप का फल कहते हैं इसलिये यथाशक्ति समाधिमरण के विषय में पूर्ण प्रयत्न करना चाहिए।

''सल्लेखना की विधि''

स्नेहं वैरं सङ्गं, परिग्रहं चापहाय शुद्धमनाः।
स्वजनं परिजनमपि च, क्षान्त्वा क्षमयेत् प्रियैर्वचनैः।।124।।

अन्वयार्थ- **(स्नेहं)** राग को **(वैरं)** बैर को **(सङ्गं)** मोह को **(च)** और **(परिग्रहं)** परिग्रह को **(अपहाय)** छोड़कर **(शुद्ध मनाः)** शुद्ध मन वाला होता हुआ सल्लेखना धारी श्रावक **(प्रियैर्वचनैः)** मीठे वचनों से **(स्वजनं)** अपने कुटुम्बियों से **(च)** और **(परिजनम्)** नौकर-चाकर से **(अपि)** भी **(क्षान्त्वा)** क्षमा कराके **(क्षमयेत्)** स्वयं क्षमा करे।

भावार्थ- स्नेह (राग) को द्वेष (बैर) को मोह को और परिग्रह को छोड़ कर शुद्ध मन वाला होता हुआ प्राणी मीठे (प्रिय) वचनों से अपने कुटुम्बियों से और नौकर-चाकरों से भी क्षमा प्राप्त करके स्वयं क्षमा करे।

''सल्लेखना में आलोचना पूर्वक महाव्रत धारण का उपदेश''

आलोच्य-सर्व-मेनः, कृत कारित-मनु-मतं च निर्व्याजम्।
आरोपयेन् महाव्रत,-मामरणस्थायि निःशेषम्।।125।।

अन्वयार्थ- सल्लेखनाधारी **(कृत कारितं)** कृत, कारित **(च)** और **(अनुमतं)** अनुमोदित **(सर्वम्)** समस्त **(ऐनः)** पापों को **(निर्व्याजम्)** कपट रहित **(आलोच्य)** आलोचना करके **(अमरण स्थायि)** जीवन पर्यन्त रहने

वाले **(निःशेषम्)** समस्त (पांचों) **(महाव्रतं)** महाव्रत को **(आरोपयेन्)** धारण करें।

भावार्थ- सल्लेखनाधारी कृत, कारित, अनुमोदन से किये गये समस्त पापों को छल-कपट रहित आलोचना करके जीवन पर्यन्त रहने वाले समस्त महाव्रतों को धारण करें।

''स्वाध्याय करने का उद्देश्य''

शोकं भय-मव-सादं, क्लेदं कालुष्य-मरति-मपि हित्वा।
सत्त्वोत्साह-मुदीर्य च, मनः प्रसाद्यं श्रुतै-रमृतैः।।126।।

अन्वयार्थ- **(शोकं)** शोक को **(भयं)** डर को **(अवसादं)** स्नेह को **(क्लेदं कालुष्यं)** राग-द्वेष को और **(अरतिम्)** अप्रेम को **(अपि)** भी **(हित्वा)** छोड़ कर **(च)** और **(सत्त्वोत्साहं)** अपने बल और उत्साह को **(उदीर्य)** प्रगट करके **(अमृतैः)** अमृत के समान **(श्रुतैः)** शास्त्रों से **(मनः)** मन को **(प्रसाद्यं)** प्रसन्न करें।

भावार्थ- शोक, डर, स्नेह, राग-द्वेष और अप्रेम को छोड़कर बल एवं उत्साह को प्रगट करके अमृत के समान शास्त्रों से मन को प्रसन्न करना चाहिये।

''सल्लेखनाधारी के आहार के त्याग का क्रम''

आहारं परि-हाप्य, क्रमशः स्निग्धं विवर्द्धयेत्पानम्।
स्निग्धं च हापयित्वा, खरपानं पूरयेत्क्रमशः।।127।।

अन्वयार्थ- सल्लेखनाधारी श्रावक-**(आहारं)** अन्न के भोजन को **(परिहाप्य)** छोड़ कर **(क्रमशः)** क्रम से **(स्निग्धं पानं)** दूध और छाछ के पान को **(विवर्द्धयेत्)** बढ़ावे **(च)** और **(स्निग्धं)** दूध और छाछ के पान को **(हापयित्वा)** छोड़कर **(खरपानम्)** कांजी और गर्म जल को **(पूरयेत्)** बढ़ावे (पीवे)।

भावार्थ- सल्लेखनाधारी व्यक्ति अन्न के आहार को छोड़ कर क्रम से दूध और छाछ के पान को ग्रहण करे। और पश्चात् दूध या छाछ को भी छोड़कर कांजी और गर्म पानी को ग्रहण करे।

''खर-पान हापना-मपि, कृत्वा कृतवोपवास-मपि शक्त्या।
पंच नमस्कार-मनास्, तनुंत्यजेत् सर्व-यत्नेन।।128।।

अन्वयार्थ- **(खर पान हापनाम्)** कांजी और गर्म जल के त्याग को **(अपि)** भी, **(कृत्वा)** करके **(अपि)** फिर **(शक्त्या)** शक्ति के अनुसार **(उपवासम्)** उपवास को **(कृत्वा)** करके **(सर्वयत्येन)** सर्व प्रकार के प्रयत्न से **(पंच नमस्कारमनाः)** पंच नमस्कार मंत्र को मन से पढ़ते हुए **(तनुम्)** शरीर को **(त्यजेत्)** छोड़ें।

भावार्थ- कांजी और गर्म पानी को त्याग करके फिर शक्ति से उपवास करके सर्व प्रकार के यत्न से पंच नमस्कार मंत्र का जाप्य करता हुआ शरीर को छोड़े।

''सल्लेखना के पांच अतिचार''

जीवित-मरणाशंसे, भय-मित्र-स्मृति-निदान-नामानः।
सल्लेखनाति चाराः, पंच जिनेन्द्रैः समादिष्टाः।।129।।

अन्वयार्थ- **(जीवित मरणाशंसे)** जीने और मरने की इच्छा करना **(भय मित्र स्मृति)** डरना, मित्र को याद करना, और **(निदाननामानः)** निदान नामक (आगे भव में भोगों की इच्छा करना) ये **(पंच)** पांच **(जिनेन्द्रैः)** जिनेन्द्र भगवान के द्वारा **(सल्लेखनातिचाराः)** सल्लेखना के अतिचार **(समादिष्टाः)** कहे गये हैं।

भावार्थ- जीने की और मरने की इच्छा करना, भयभीत होना, मित्रों का स्मरण करना, आगामी भोगों की इच्छा करना ये पांच जिनेन्द्र भगवान के द्वारा सल्लेखना के अतिचार कहे गये हैं।

''सल्लेखना धारण करने का फल''

निःश्रेयस-मभ्युदयं, निस्तीरं दुस्तरं सुखाम्बु-निधिम्।
निःपिबति पीत-धर्मा, सर्वैर्दुःखै-रनालीढः।।130।।

अन्वयार्थ- **(पीत धर्मा)** धर्म रूपी अमृत का पान करने वाला सल्लेखनाधारी **(सर्वैर्दुःखैः)** समस्त दुःखों से **(अनालीढः)** रहित होता हुआ **(निस्तीरं)** अपार **(दुस्तरं)** दुर्लभ **(अभ्युदयं)** उत्कृष्ट **(सुखाम्बु निधिम्)** सुख के सागर स्वरूप **(निःश्रेयसं)** मोक्ष को **(निःपिबति)** प्राप्त करता है।

भावार्थ-धर्म रूपी अमृत का पान करने वाला सल्लेखनाधारी समस्त दुःखों से रहित होता हुआ अपार दुस्तर (दुर्लभ) उत्कृष्ट सुख के सागर स्वरूप मोक्ष को पाता है।

“मोक्ष का लक्षण”

जन्म-जरामय-मरणै:, शौके र्दु:खैर्भयैश्च परिमुक्तम्।
निर्वाणं शुद्ध-सुखं, नि:श्रेयस-मिष्यते नित्यम्।।131।।

अन्वयार्थ- **(नित्यम्)** शाश्वत **(जन्म-जरा-मय-मरणै:)** जन्म, जरा, रोग, मरण **(शौके र्दु:खैर्भयैश्च परिमुक्तम्)** शोक दु:ख और भय से रहित **(शुद्ध-सुखं)** अतीन्द्रिय सुख वाला **(नि:श्रेयसं)** परम कल्याणमय तत्त्व **(निर्वाणं)** मोक्ष **(इष्यते)** कहा गया है।

भावार्थ- जन्म, बुढ़ापा, रोग, मृत्यु से, शोक से, दु:खों और सप्त भयों से रहित अतीनिन्द्रय सुख वाला शाश्वत परम कल्याण मय मोक्ष कहा गया है।

“मुक्त जीवों का वर्णन”

विद्या-दर्शन-शक्ति,-स्वास्थ्य-प्रह्लाद-तृप्ति-शुद्धि-युज:।
निरतिशया निरवधयो, नि:श्रेयस-मावसन्ति सुखम्।।132।।

अन्वयार्थ- मुक्त जीव **(नि:श्रेयसं)** मोक्ष में **(विद्या दर्शन शक्ति)** अनंतज्ञान, अनंतदर्शन, अनंतवीर्य **(स्वास्थ्य प्रह्लाद तृप्ति शुद्धि युज:)** परमोदासीनता, अनंत सुख, तृप्ति और निर्मलता से युक्त होते हुए **(निरतिशया)** गुणों की न्यूनाधिकता रहित **(निरवधय:)** काल की मर्यादा से रहित **(सुखम्)** सुख पूर्वक **(आवसन्ति)** निवास करते हैं।

भावार्थ- मुक्त जीव मोक्ष में, अनंतज्ञान, अनंतदर्शन, अनंतवीर्य, स्वास्थ्य **(परमोदासीनता)** अनंतसुख, तृप्ति और निर्मलता से युक्त होते हुए गुणों की न्यूनाधिकता से रहित, काल की मर्यादा से रहित सुख पूर्वक निवास करते हैं।

“मुक्त जीवों के गुणों में विकार का अभाव”

काले कल्प शतेऽपि च, गते शिवानां न विक्रियालक्ष्या।
उत्पातोऽपि यदि स्यात्, त्रिलोक-सम्भ्रान्ति-करण पटु:।।133।।

अन्वयार्थ- **(यदि)** यदि (अगर) **(त्रिलोक सम्भ्रान्ति करण पटु:)** तीनों लोकों में खलबली पैदा करने वाला **(उत्पाद: अपि)** उपद्रव भी (**स्यात्**) हो तो भी **(कालेकल्पशते)** सैकड़ों कल्पकालों के **(गतेऽपि)** बीत जाने पर भी **(शिवानां)** सिद्धों में (गुणों में) **(विक्रिया)** कोई विकार **(न लक्ष्या)** दिखाई नहीं देता है।

भावार्थ- यदि तीनों लोकों में खलबली पैदा करने वाला उपद्रव भी हो तो भी सैकड़ों कल्प कालों के बीत जाने पर भी सिद्धों में कोई विकार दृष्टिगोचर नहीं होता।

''मुक्त जीवों की शोभा का वर्णन''

निःश्रेयस-मधि-पन्नास्, त्रैलोक्य-शिखामणिश्रियं दधते।
निष्किट्टि-कालिकाच्छवि,-चामी-कर-भासु-रात्मानः।।134।।

अन्वयार्थ- **(निःश्रेयसं)** मोक्ष को **(अधिपन्नाः)** प्राप्त करने वाले जीव **(निष्किट्टि कालिकाच्छवि चामी कर भासु रात्मानः)** कीट और दोष से रहित सुवर्ण के समान, आत्मा के धारक होते हुए **(त्रैलोक्य शिखामणिश्रियं)** तीनों लोकों के शिखर में मणि के समान शोभा को **(दधते)** धारण करते हैं।

भावार्थ- मोक्ष को प्राप्त जीव किट्ट कालिमा से रहित दैदीप्यमान सुवर्ण के समान निर्मल आत्मा के धारक होते हुए तीनों लोकों के शिखर में मणि के समान शोभा को धारण करते हैं।

''समीचीन धर्म धारण करने का फल''

पूजार्था-ज्ञैश्वर्यैः, बल-परिजन-काम-भोग-भूयिष्ठैः।
अतिशयित-भुवन मद्भुत, मभ्युदयं फलति सद्धर्मः।।135।।

अन्वयार्थ- **(सद्धर्मः)** सल्लेखनादि धर्म के धारण करने से **(पूजार्था-ज्ञैश्वर्यैः)** प्रतिष्ठा धन और आज्ञा के ऐश्वर्य तथा **(बल परिजन काम भोग भूयिष्ठैः)** बल, नौकर, चाकर और भोगों की अधिकता से **(अतिशयित भुवनं)** लोकातिशायी और **(अद्भुतं)** आश्चर्यजनक **(अभ्युदयं)** इन्द्रादि पद की प्राप्ति रूप **(फल)** (फलति) प्राप्त होता है।

भावार्थ- समीचीन धर्म धारण करने से प्रतिष्ठा, धन और आज्ञा के ऐश्वर्य तथा बल, नौकर-चाकर और भोगों की अधिकता से लोकातिशय और आश्चर्यजनक इन्द्र आदि पद की प्राप्ति रूप उत्कर्ष प्राप्त होता है।

।।इति षष्ठोऽधिकारः।।

सप्तमोऽधिकारः

''श्रावक की ग्यारह प्रतिमा''

श्रावक-पदानि देवै, रेका-दश देशि-तानि येषु खलु।
स्वगुणाः पूर्व-गुणैः सह, सन्तिष्ठन्ते क्रम-विवृद्धाः।।136।।

अन्वयार्थ- **(देवैः)** सर्वज्ञ देव के द्वारा **(श्रावक पदानि)** श्रावक के दर्जे **(खलु)** निश्चय से **(एकादश)** ग्यारह **(देशितानि)** कहे गये हैं **(येषु)** जिन प्रतिमा में **(स्वगुणाः)** अपने-अपने दर्जे के गुण **(पूर्व गुणैः सह)** पहले-पहले दर्जे के गुणों सहित **(क्रम विवृद्धाः)** क्रम से बढ़ते हुए **(सन्तिष्ठन्ते)** रहते हैं।

भावार्थ- सर्वज्ञ देव के द्वारा श्रावकों के दर्जे निश्चय से ग्यारह कहे गये हैं। जिनमें अपने-अपने दर्जे के गुण पहले-पहले दर्जे के गुणों सहित क्रम से बढ़ते हुए रहते हैं।

''दर्शन प्रतिमाधारी का लक्षण''

सम्यग्दर्शन-शुद्धः, संसार-शरीर-भोग-निर्विण्णः।
पंच गुरु चरण-शरणो, दर्शनिकस्तत्त्व-पथ गृह्यः।।137।।

अन्वयार्थ- जो **(सम्यग्दर्शन शुद्धः)** दोष रहित सम्यग्दर्शन का धारक हो **(संसार शरीर भोग निर्विण्णः)** संसार शरीर और भोगों से विरक्त हो **(पंच गुरु चरण शरणाः)** पंच परमेष्ठी की शरण में रहने वाला हो **(तत्त्व पथ गृह्यः)** चारित्र मार्ग के पक्ष को ग्रहण किये हो (अष्ट मूलगुण आदि) (वह) **(दार्शनिकः)** दर्शनप्रतिमाधारी कहलाता है।

भावार्थ-जो दोष रहित शुद्ध सम्यग्दर्शन का धारक है, संसार, शरीर और भोगों से विरक्त है, पञ्च परमेष्ठी के चरणों की शरण को प्राप्त है एवं तत्त्व पथ (मोक्षमार्ग) को ग्रहण करने वाला दार्शनिक प्रतिमाधारी कहलाता है।

''व्रत प्रतिमाधारी का लक्षण''

निरति-क्रमण-मणु-व्रत, पञ्चक मपि शील सप्तकं चापि।
धारयते निःशल्यो, योऽसौ व्रतिनां मतो व्रतिकः।।138।।

अन्वयार्थ- **(यः)** जो श्रावक **(निःशल्यः)** माया, मिथ्यात्व, निदान इन तीन शल्यों से रहित होता हुआ **(निरति क्रमणं)** अतिचार रहित **(अणु व्रत पञ्चकं)** पांच अणुव्रतों को **(च)** और **(शील सप्तकं अपि)** सात शील व्रतों को भी **(धारयते)** (धारण) पालन करता है **(असौ)** वह **(व्रतिनां)** व्रती पुरुषों के द्वारा **(व्रतिकः)** व्रत प्रतिमा धारी **(मतः)** माना जाता है (कहा गया है)।

भावार्थ- जो माया, मिथ्या, निदान इन तीन शल्यों से रहित होता हुआ अतिचार रहित पांच अणुव्रतों को और सात शीलव्रतों को धारण करता है, वह व्रत प्रतिमाधारी माना जाता है।

''सामायिक प्रतिमाधारी का लक्षण''

चतुरावर्त-त्रितयश्, चतुः प्रणामः स्थितो यथा-जातः।
सामयिको द्विनिषद्यस्, त्रियोग-शुद्धस् त्रिसन्ध्यमभिवन्दी।।139।।

अन्वयार्थ- **(चतुरावर्त त्रितयश्)** चारों दिशाओं में तीन-तीन आवर्त करने वाला **(चतुः प्रणामः)** चारों दिशाओं में चार (एक-एक) प्रणाम करने वाला **(यथाजातः)** आभ्यन्तर और बाह्य परिग्रह रहित मुनि के समान **(स्थितः)** स्थित **(द्विनिषद्यस्)** खड्गासन या पद्मासन में स्थित **(त्रियोग शुद्धस्)** मन, वचन, काय इन तीनों योगों को शुद्ध रखता हुआ **(त्रिसन्ध्यम्)** सुबह, दोपहर, शाम तीनों समय **(अभिवन्दी)** अभिवन्द (सामायिक) करने वाला **(सामयिकः)** सामायिक प्रतिमाधारी है।

भावार्थ- चारों दिशाओं में तीन-तीन आवर्त करने वाला, चारों दिशाओं में चार (एक-एक) प्रणाम करने वाला, बाह्य, आभ्यन्तर परिग्रह से रहित मुनि के समान स्थित खड्गासन या पद्मासन पूर्वक तीनों योगों (मन, वचन, काय) को शुद्ध रखता हुआ सुबह, दोपहर और शाम तीनों समय सामायिक करने वाला सामायिक प्रतिमाधारी कहलाता है।

''प्रोषध प्रतिमाधारी का लक्षण''

पर्व-दिनेषु-चतुर्ष्वपि, मासे-मासे स्व-शक्ति-मनि-गुह्य।
प्रोषध-नियम-विधायी, प्रणधि-परः प्रोषधानशनः।।140।।

अन्वयार्थ- **(मासे-मासे)** प्रत्येक माह के **(चतुर्षु)** चारों **(अपि)** ही **(पर्व दिनेषु)** पर्व के दिनों में **(स्व शक्तिं)** अपनी शक्ति को **(अनिगुह्य)** नहीं छिपाकर **(प्रणधि परः)** धर्म ध्यान में तत्पर होता हुआ **(प्रोषध नियम विधायी)** प्रोषध के नियम का विधान करता है (अथवा नियम से) **(प्रोषधानशनः)** प्रोषधोपवास प्रतिमाधारी है।

भावार्थ- हर महीने चारों ही पर्वों में (दोनों अष्टमी, दोनों चतुर्दशी) अपनी शक्ति को नहीं छिपाकर धर्म ध्यान में तत्पर होता हुआ प्रोषधोपवास करता है वह प्रोषधोपवास प्रतिमाधारी कहलाता है।

"सचित्तत्याग प्रतिमाधारी का लक्षण"

मूल-फल-शाक शाखा, करीर-कन्द-प्रसून-बीजानि।
नामानि योऽत्ति सोऽयं, सचित्त-विरतो दयामूर्तिः।।141।।

अन्वयार्थ- **(यः)** जो **(दयामूर्तिः)** दयालु श्रावक **(आमानि)** कच्चे **(मूल फल)** मूल-फल **(शाक)** भाजी **(शाखा)** वृक्ष की नई कोंपल **(करीर)** बांस के अंकुर **(कन्द)** कन्द **(प्रसून)** फूल **(बीजानि)** गेंहू, चना आदि **(न अत्ति)** नहीं खाता है **(सोऽयं)** वही **(सचित्त विरतो)** सचित्तत्याग प्रतिमाधारी श्रावक है।

अर्थ- जो दयामूर्ति श्रावक कच्चे मूल, फल, शाक, शाखा, करीर, कन्द, प्रसून बीजादि को नहीं खाता है वह सचित्तत्याग प्रतिमाधारी श्रावक है।

"रात्रिभुक्ति त्याग प्रतिमाधारी का लक्षण"

अन्नं पानं खाद्यं, लेह्यं नाश्नाति यो विभावर्याम्।
स च रात्रि-भुक्ति-विरतः, सत्त्वेष्वनु कम्प-मान-मनाः।।142।।

अन्वयार्थ- **(सत्त्वेषु)** प्राणियों पर **(अनुकम्पमानमनाः)** दयालु चित्त होता हुआ **(यः)** जो श्रावक **(विभावर्याम्)** रात्रि में **(अन्नं)** अन्न को **(पानं)** पीने योग्य वस्तु को **(खाद्यं)** लड्डू, पेड़ा आदि खाद्य पदार्थ को **(लेह्यं)** चाटने योग्य रबड़ी आदि को **(नाश्नाति)** नहीं खाता है **(सः)** वह **(रात्रि भुक्ति विरतः)** रात्रि भोजन त्याग प्रतिमाधारी श्रावक है।

अर्थ- प्राणियों पर दया रूप होता हुआ जो व्यक्ति रात्रि में अन्न को,

पीने योग्य वस्तु को, खाद्य वस्तु को, चाटने योग्य वस्तु को नहीं खाता है वह रात्रि भुक्ति त्याग प्रतिमा का धारक कहलाता है।

''ब्रह्मचर्य प्रतिमाधारी का लक्षण''

मल-बीजं मल-योनिं, गलन्मलं पूति-गन्धि वीभत्सं।
पश्यन् नङ्ग-मनङ्गाद्, विरमति यो ब्रह्मचारी सः।।143।।

अन्वयार्थ- **(यः)** जो **(अङ्गं)** शरीर को **(मल बीजं)** मल से उत्पन्न होता हुआ **(मल योनिं)** मल को उत्पन्न करने वाला **(गलन्मलं)** मल को प्रवाहित (बहाने) करने वाला **(पूति गन्धि)** दुर्गन्धयुक्त **(वीभत्सं)** ग्लानिजनक **(पश्यन्)** देखता हुआ **(अनङ्गात्)** काम सेवन से **(विरमति)** विरक्त होता है **(सः)** वह **(ब्रह्मचारी)** ब्रह्मचर्य प्रतिमाधारी कहलाता है।

भावार्थ- जो शरीर को रजोवीर्य रूप मल से उत्पन्न **(मल बीज)** मल को उत्पन्न करने वाला, मल योनि मल को बहाने वाला दुर्गन्धयुक्त और घृणात्मक देखता हुआ काम सेवन से विरक्त होता है, वह ब्रह्मचार्य प्रतिमाधारी कहलाता है।

''आरम्भत्याग प्रतिमाधारी का लक्षण''

सेवा-कृषि-वाणिज्य, - प्रमुखा-दारम्भतो व्युपारमति।
प्राणाति-पात-हेतो, र्योऽसा-वा-रम्भ-विनिवृत्तः।।144।।

अन्वयार्थ- **(यः)** जो **(प्राणाति पात हेतोः)** जीव हिंसा के कारण **(प्रमुखात्)** मुख्य रूप से **(सेवा कृषि वाणिज्य)** नौकरी, खेती, व्यापार आदिक **(आरम्भतः)** आरम्भ के कामों में **(व्युपारमति)** विरक्त होता है **(असौ)** यह **(वह)** **(आरम्भ विनिवृत्तः)** आरम्भ त्याग प्रतिमाधारी श्रावक है।

भावार्थ- जो जीव हिंसा के कारण मुख्य रूप से नौकरी, खेती, व्यापार आदि आरम्भ के कार्यों से विरक्त होता है, वह आरम्भ त्याग प्रतिमाधारी कहलाता है।

''परिग्रहत्याग प्रतिमाधारी का लक्षण''

बाह्येषु दशसु वास्तुषु, ममत्व-मुत्सृज्य निर्ममत्वरतः।
स्वस्थः सन्तोष-परः, परिचित परिग्रहाद्-विरतः।।145।।

अन्वयार्थ-**(यः)** जो **(बाह्येषु)** बाह्य **(दशसु)** दस प्रकार के

(वास्तुषु) परिग्रह में **(ममत्वं)** ममता को **(उत्सृज्य)** छोड़कर **(निर्ममत्वरतः)** निर्मोही होता हुआ **(स्वस्थः)** मायाचार रहित और **(सन्तोष परः)** परिग्रह की चाह रहित होता है वह **(परिचित्त परिग्रहाद्)** समस्त परिग्रह से (सब ओर से चित्त में बसे परिग्रह से) **(विरतः)** विरक्त परिग्रहत्याग प्रतिमाधारी है।

भावार्थ- जो बाह्य दस प्रकार के परिग्रहों से ममता को छोड़ कर, निर्मोही होता हुआ स्वात्मस्थ **(मायाचार से रहित)** और परिग्रह की चाह से रहित होता है वह समस्त परिग्रहत्याग प्रतिमाधारी कहलाता है।

''अनुमतित्याग प्रतिमाधारी का लक्षण''

अनुमतिरारम्भे वा, परिग्रहे ऐहि-केषु कर्मसु वा।
नास्ति खलु यस्य समधी, रनुमति-विरतः समन्तव्यः।।146।।

अन्वयार्थ- **(यस्य)** जिसकी **(आरम्भे)** आरम्भ में **(वा)** तथा **(परिग्रहे)** परिग्रहों में **(वा)** और **(ऐहि केषु)** विवाहादि इस लोक संबंधी **(कर्मसु)** कार्यों में **(अनुमतिः)** अनुमति (सलाह) **(नास्ति)** नहीं होती है **(सः)** वह **(समधीः)** समता बुद्धि वाला (खलु) निश्चय से **(अनुमतिविरतः)** अनुमति त्याग प्रतिमाधारी **(मन्तव्यः)** जानना चाहिये (मानना चाहिये)।

भावार्थ-जिसकी आरंभ के कार्यों में, परिग्रहों में और विवाह आदि लौकिक कार्यों में अनुमति नहीं होती है वह ममत्व बुद्धि या रागद्वेष से रहित व्यक्ति निश्चय से अनुमति त्याग प्रतिमाधारी कहलाता है।

''उद्दिष्टत्याग प्रतिमाधारी का लक्षण''

गृहतो मुनिवन-मित्वा, गुरुप-कण्ठे व्रतानि परिगृह्य।
भैक्ष्या-शनस्तपस्यन्,-नुत्कृष्टश्चेल खण्ड-धरः।।147।।

अन्वयार्थ- जो **(गृहतो)** घर से **(मुनि वनं)** मुनि के आश्रम को **(इत्वा)** जाकर **(गुरुप कण्ठे)** गुरु के पास में **(व्रतानि)** व्रतों को **(परिगृह्य)** ग्रहण करके **(तपस्यन्)** तप करता हुआ **(भैक्ष्याशनः)** भिक्षा भोजन प्राप्त करने वाला तथा **(चेलखण्डधरः)** कौपीन और खण्ड वस्त्र का धारी **(उत्कृष्टः)** उत्कृष्ट श्रावक उद्दिष्टत्याग प्रतिमाधारी है।

भावार्थ-घर से मुनि के आश्रम को जाकर गुरु के पास में व्रतों को ग्रहण

करके तप करने वाला भिक्षा से भोजन करने वाला तथा कौपीन और खण्ड वस्त्र का धारक व्यक्ति उत्कृष्ट श्रावक या उद्दिष्टत्याग प्रतिमाधारी कहलाता है।

''श्रेष्ठज्ञाता का लक्षण''

पाप-मराति धर्मो, बंधु र्जीवस्य चेति निश्चिन्वन्।
समयं यदि जानीते, श्रेयो ज्ञाता ध्रुवं भवति।।148।।

अन्वयार्थ- **(जीवस्य)** जीव का **(पापं)** पाप **(अरातिः)** शत्रु है **(च)** और **(धर्मो)** धर्म **(बंधुः)** मित्र है **(इति)** इस प्रकार **(ध्रुवं)** हमेशा **(निश्चिन्वन्)** निश्चय रखता हुआ श्रावक **(समयं यदि)** यदि शास्त्र को **(जानीते)** जानता है तो वह **(श्रेयो ज्ञाता)** श्रेष्ठ ज्ञाता **(भवति)** होता है।

भावार्थ-जीव का पाप शत्रु है और धर्म मित्र है इस दृढ़ निश्चय के साथ यदि कोई शास्त्र को जानता है, तो वह निश्चय से श्रेष्ठ ज्ञाता होता है (कहलाता) है।

''रत्नत्रय के सेवन का फल''

येन स्वयं वीत-कलङ्क-विद्या, दृष्टि-क्रिया-रत्न-करण्ड-भावम्।
नीतस्तमा-याति-पतिच्छयेव, सर्वार्थसिद्धिस् त्रिषु-विष्टपेषु।।149।।

अन्वयार्थ- **(येन)** जिस श्रावक ने **(स्वयं)** अपनी आत्मा को **(वीतकलङ्क)** निर्दोष **(विद्या दृष्टि क्रिया)** सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र रूप **(रत्नकरण्डभावम्)** रत्नों का पिटारा **(नीतः)** बनाया है **(तम्)** उस पुरुष को **(त्रिषु विस्टपेषु)** तीनों लोक में **(पतिच्छयेव)** पति की इच्छा करती हुई के समान **(सर्वार्थ सिद्धिः)** धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि रूपी नारी **(आयाति)** प्राप्त होती है।

भावार्थ- जिस भव्य ने अपनी आत्मा को निर्दोष सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन और सम्यक्चारित्र रत्नों का पिटारा बनाया है, उसको तीनों लोकों में स्वयं के वर की इच्छा से ही चारों पुरुषार्थों की सिद्धि रूप नायिका प्राप्त होती है।

''इष्ट प्रार्थना'' (अंतिम मंगल)

सुखयतु सुखभूमिः, कामिनं कामि-नीव
सुत-मिव जननी मां, शुद्ध-शीला भुनक्तु।

कुल-मिव गुण-भूषा, कन्याका सम्पुनीताज्,
जिन-पति-पद-पद्म,-प्रेक्षिणी दृष्टि-लक्ष्मीः।।150।।

अन्वयार्थ-(जिन पति पद पद्म प्रेक्षिणी) जिनराज के चरण कमल को प्रेक्षण करने वाली (शुद्ध शीला) सप्त शीलों से युक्त **(सुखभूमिः)** सुख की जननी **(गुण-भूषा)** आठ मूल गुणों से (सुशोभित) विभूषित **(दृष्टि लक्ष्मीः)** सम्यग्दर्शन रूपी लक्ष्मी **(कामिनं)** कामी पुरुषों को **(सुख भूमिः)** सुख देने वाली **(कामिनीव)** स्त्री की तरह **(माम्)** मुझको **(सुख यतु)** सुखी करे तथा **(सुताम्)** पुत्र को (शुद्धशीला) सदाचार देने वाली (शीलवती) **(जननी इव)** माता की तरह **(मां भुनक्तु)** मेरी रक्षा करे और **(कुलं)** कुल को **(गुणभूषा)** गुणों से विभूषित **(कन्या इव)** कन्या के समान **(माम्)** मुझको **(सम्पुनीतात्)** पवित्र करे।

अर्थ-जिन राज के निरूपति पदार्थों को श्रद्धान करने वाली सप्त शीलों से युक्त सुख की जननी अष्ट मूलगुण सहित सम्यग्दर्शन रूपी लक्ष्मी (सम्पत्ति) नायक का सुख देने वाली नायिका की तरह मुझको सुखी करके तथा पुत्र को शीलवती माता की तरह मेरी रक्षा करें कुल की गुणवती कन्या के समान मुझको पवित्र करे।

* * *

उपसर्ग विजेता परम पूज्य गणाचार्य श्री 108 विराग सागरजी महाराज द्वारा लिखित, सम्पादित एवं संकलित तथा श्री सम्यग्ज्ञान दिगम्बर जैन विराग विद्यापीठ द्वारा प्रकाशित प्रवचन सत् साहित्य

सं.	नाम	मूल्य
1.	संस्कृत सर्वोदया टीका (वारसाणुवेक्खा) भाग 1-2	150
2.	संस्कृत रत्नत्रयवर्धिनी टीका (रयणसार) भाग 1-2	185
3.	संस्कृत श्रमणप्रबोधनी टीका (पाहुडद्वय)	
	(शोधपूर्ण साहित्य)	
4.	शुद्धोपयोग	40
5.	सम्यग्दर्शन	35
6.	आगम चक्खू साहू	25
7.	सल्लेखना से समाधि	30
8.	संत साधना के प्रेरक प्रसंग	20
9.	परम दिगम्बर जैन मुनि (हिन्दी, मराठी, कन्नड़, तमिल, अंग्रेजी)	45
10.	सर्वोदयी दिगम्बर जैन धर्म	30
11.	तीर्थंकर दिव्य दर्शन	30
12.	तीर्थंकर दर्शन	
13.	व्यसन विचार (ग्रंथ)	200
14.	फूल नहीं, हैं काँटे	
15.	संस्कार सुरभि (हिन्दी, गुजराती, मराठी)	18
16.	जिनेन्द्र दर्शन, जिनेन्द्र पूजन	10
17.	आध्यात्मिक शंका-समाधान	30
18.	आध्यात्मिक तत्त्व-चर्चा	40
	(चिंतन साहित्य)	
19.	चैतन्य चिन्तन भाग-1	15
20.	चैतन्य चिन्तन भाग-2	15
21.	चैतन्य चिन्तन भाग-3	15
	(बालोपयोगी साहित्य)	
22.	बाल विज्ञान भाग-1 (हिन्दी, इंग्लिश, मराठी, कन्नड़)	10
23.	बाल विज्ञान भाग-2 (हिन्दी, इंग्लिश)	10
24.	बाल विज्ञान भाग-3	10
25.	बाल विज्ञान भाग-4	10
26.	कर्म विज्ञान भाग-1 (हिन्दी, इंग्लिश)	10
27.	कर्म विज्ञान भाग-2	10
28.	कर्म विज्ञान भाग-3	10
	(कथा साहित्य)	
29.	नैतिक कथा मंजूषा भाग-1	30
30.	नैतिक कथा मंजूषा भाग-2	30
	(अनुवाद साहित्य)	
31.	वारसाणुवेक्खा	
32.	परमरत्नार्चना संग्रह	20
33.	सामायिक पाठ (हिन्दी, गुजराती)	10
	(पद्य साहित्य)	
34.	भावों के विशुद्ध क्षण	15
35.	मुक्ताञ्जलि भाग-1	15

36.	मुक्ताञ्जलि भाग-2	15	37.	नव देवता निर्वाण क्षेत्र पूजा	

(संकलित/सम्पादित साहित्य)

38.	साधना से समाधि	20	39.	विमल नित्य पाठावलि	25
40.	आराधना	35	41.	सुभाषित संग्रह	40
42.	आप्त अर्चना		43.	मानतुंग की अमर भक्ति (सचित्र भक्तामर)	65
44.	साधना	10	45.	अनुप्रेक्षा	10
46.	जिनागम दीप	251	47.	सम्मेद शिखर विधान	
48.	चारित्र शुद्धि व्रत	25	49.	करुणामूर्ति सन्त	100
50.	तपस्वी सम्राट	10	51.	यज्ञोपवीत विधि	
52.	साधना के सोपान		53.	पदम् पुराण प्रश्नोत्तरी	100
54.	स्तोत्र भारती	51			

(एकांकी/नाटक साहित्य)

55.	सत्यमित्र-सत्यदृष्टि		56.	प्रद्युम्न हरण	

(पूज्य आचार्य श्री पर आधारित साहित्य)

57.	विरागाभिवंदन अभिनंदन		58.	निस्पृही संत भाग-1-2	60
59.	विराग सेतु (महाकाव्य) (हिन्दी, गुजराती, प्राकृत) भाग-1				100
60.	विराग सेतु (महाकाव्य) भाग-2				
61.	संत काव्य की परम्परा में आचार्य विरागसागर				65
62.	कमल से महाकमल				
63.	घटनायें ये जीवन की	80	64.	दिगम्बरत्व के चितेरे	150
65.	विराग सिंधु की उर्मियाँ	15	66.	विराग वाटिका	41
67.	भक्ति की झंकार	25	68.	विराग काव्यांजलि	
69.	धर्म पीयूष	30	70.	ऐसे चलो मिलेगी राह	40
71.	दूर नहीं है मंजिल	30	72.	उड़ रे पंछी	10
73.	तीर्थंकर वर्धमान	15	74.	पहले देव-पूजा फिर काम दूजा	25
75.	तीर्थंकर ऐसे बनो	60	76.	तट की ओर	10
77.	सिर्फ दो प्रवचन	10	78.	इष्टोपदेश (प्रवचन)	
79.	मानतुंग की अमरभक्ति	150	80.	कल्याणक महोत्सव	20
81.	दान तीर्थ	20	82.	धर्म के दश सोपान	20
83.	जीवों पर दया करो, शुद्ध शाकाहार करो			20	
84.	बुराईयाँ ही जेल, अच्छाईयाँ ही मुक्ति			10	
85.	प्रवचन वर्षा	25	86.	कर्तव्यमेव कर्तव्यं	25
87.	श्रद्धा प्रसून	25	88.	मोक्ष की राह	25
89.	विरागामृत-1	30	90.	विरागामृत-2	

100. समाधि तंत्र (प्रवचन)
101. समयोचित शिक्षायें भाग-1 20
102. समयोचित शिक्षायें भाग-2 20
103. समयोचित शिक्षायें भाग-3 20
104. विराग मंथन (हिन्दी, अंग्रेजी) 5
105. रजत पुष्प 51
106. कहानी सबसे सुहानी 30
107. अक्षय निधि (हिन्दी, अंग्रेजी) 10
108. संस्कार की लहरें 20
109. चलो चलें प्रभु दर्शन को 30
110. आध्यात्मिक धर्म प्रवचन 30
111. घर-घर की कहानी 30
112. वारसाणुवेक्खा प्रवचन 125
113. पर्यूषण निधि 15
114. पद्मनंदि पंचविंशतिः अधिकार 1. धर्मोपदेशामृतम् 200
115. पद्मनंदि पंचविंशतिः अधिकार 2. दानोपदेशम् 40
116. पद्मनंदि पंचविंशतिः अधिकार 3. अनित्य पञ्चाशत् 50
117. पद्मनंदि पंचविंशतिः अधिकार 4-5. एकत्व सप्तति तथा यतिभावनाष्टकम् 85
118. पद्मनंदि पंचविंशतिः अधिकार 6. उपासक संस्कार 60
119. पद्मनंदि पंचविंशतिः अधिकार 7. देशव्रतोद्योतनम् 60
120. पद्मनंदि पंचविंशतिः अधिकार 8-9 सिद्धस्तुति एवं आलोचना 85
121. मेरी भावना
122. आचार्य विराग सागर साहित्य दर्शन 10
123. मेरी भावना प्रवचन
124. फॉर यूथ प्रोग्रेस 22
125. रत्नकरण्डक श्रावकाचार प्रवचन भाग-1 100
126. सामायिक पाठ प्रवचन 85
127. विराग संध्या 20
128. विराग अर्चना 40
129. स्वर्ग पुष्प 30
130. षट्लेश्या प्रवचन
131. ऐसे बनायें घर को स्वर्ग
132. क्यूँ इतना अभिमान है.... 30
133. सिद्धों का खजाना 30
134. अपने नैतिक कर्त्तव्य 30
135. श्रुतज्ञानवर्धक विधान 20

Video D.V.D

1. आचार्य पदारोहण द्रोणगिरि
2. राष्ट्रीय रजत मुनि दीक्षा जयन्ती, उद्गाँव
3. उपसर्ग पर उत्कर्ष की यात्रा
4. आर्यिका विशाान्तश्री माताजी, समाधि
5. व्यसन मुक्ति शाकाहार अभियान
6. लोक और मध्यलोक
7. ज्योतिर्लोक और चन्द्रयात्रा
8. जेल प्रवचन
9. स्कूल प्रवचन
10. शाकाहार रैली
11. अहिंसा रैली
12. न्यायालय में प्रवचन
13. 25 दीक्षायें- श्रवणबेलगोला
14. 11 दीक्षायें-गाँधीनगर
15. 8 दीक्षायें-गिरनारजी
16. 11 दीक्षायें-किशनगढ़

17. 26 दीक्षायें-उदयपुर 18. 25 दीक्षायें-जयपुर
19. 8 दीक्षायें-इन्दौर 20. स्वर्णिम जन्म जयन्ती
21. सिद्धांत एवं आध्यात्मिक प्रवचन (वारसाणुवेक्खा, सामायिक पाठ, तत्त्वार्थ सूत्र, पद्मनंदि पंचविंशतिका भाग-1-14) 22. मातृभक्ति
23. देश के नाम कलंक बूचड़खाने

Audio DVD

1. श्यामा के लाल 2. साधना के सरताज
3. गुरुवर का जयकारा 4. प्रवचन वर्षा (दशधर्म, सोलहकारण)
5. श्री विराग सागर नमोऽस्तु ते 6. करें गुरु भक्ति
7. चलें गुरुवर के द्वार 8. गीत गुरु के गायेंगे
9. जियो हजारों साल गुरुवर 10. मेरे मन वीणा के तारे
11. विराग स्वर्णोत्सव 12. रजतवर्ष मुनिदीक्षा का
13. आचार्य श्री विरागसागरजी महाराज पूजा
14. हे सन्मति-सन्मति दो 15. स्वर्णिम जयन्ती याद रहेगी
16. प्रथम सूरि बुंदेलखण्ड के 17. गुरु नाम की धूम मची है

साहित्य प्राप्ति स्थान

✻ **श्री सम्यग्ज्ञान विराग विद्यापीठ** चैत्यालय मंदिर, बताशा बाजार, भिण्ड (म.प्र.) सम्पर्क सूत्र : पं. वीरेन्द्र जैन (मो. 9754803220) ✻ **आचार्य श्री विराग सागर विद्यापीठ (बी.एड.कॉलेज)** पुष्प विहार कॉलोनी, बीना-470113, जिला-सागर (म.प्र.) ✻ **विराग फाउण्डेशन,** द्वारा-श्री अरुण कोटड़िया, II-A विक्रम नगर सोसायटी, उस्मानपुरा, अहमदाबाद-380013 (गुजरात) ✻ **श्री भूपेन्द्र शांतिलाल शाह,** 12-B, वर्धमान सोसायटी, डेरी रोड, मेहसाना-2 (गुजरात) सम्पर्क सूत्र- श्री भूपेन्द्र शाह (मो. 9898494914, 9829452020) ✻ **विराग महिला मंच,** बोरीवली, मुम्बई (महा.) ✻ **श्रीमती पुष्पा पाटनी,** 574, शांतिनगर, जैन मंदिर के सामने, गोपालपुर वायपास, जयपुर (राज.) मो. 09460765050✻ **श्री मनीष पाटनी,** नया बाजार, 54, धर्मकांटा के पास, अजमेर (राज.) मो. 09414002306✻ **श्री तिलोक प्रिंटिंग प्रेस, विष्णु व्यास** मोहता चौक, बीकानेर (राज.) मो. 9314962475 ✻ **राष्ट्रीय विराग युवा मंच, अध्यक्ष – श्री राजेश जैन** अंजनी नगर, इन्दौर मो. 09425316970✻ **राष्ट्रीय युवा मंच अध्यक्ष – श्री पंकज पाटनी** 72, विंध्याचल नगर, एरोड्रम रोड, इन्दौर मो. 09425476665 ✻ **डॉ. महेन्द्र कुमार जैन 'मनुज'** 22/2, रामगंज, जिन्सी, इन्दौर-7 मो. 09826091247